वीरवर राठोड दुर्गादास के
जीवन पर आधारित शौर्य
पूर्ण ऐतिहासिक उपन्यास

प्रकाशक : कल्पना प्रकाशन, कृष्णकुंज, बीकानेर
मुद्रक : पवन आर्ट प्रेस, बीकानेर
आवरण : गौतम, बीकानेर
मूल्य : साढे तीन रुपये
प्रथम संस्करण : १९६६

Kesaria Pagree (novel) By . Yadvendra Sharma, "Chandra" Rs 3 50/—



राजस्थान के महान
स्वतन्त्रता प्रेमी महाराणा
प्रताप को सश्रद्धा !

के स रि या

यादवेन्द्र

ंया पगड़ी

शर्मा 'चन्द्र'

मैं इतना ही कहूँगा

ऐतिहासिक उपन्यास परम्परा मे 'केसरिया पगडी' मेरा दूसरा उपन्यास है। इसके पूर्व मेरा 'खून का टीका' (महाराणा हमीर के जीवन पर आधारित) प्रकाशित हो चुका है। वह पाठको व समालोचको द्वारा अत्यन्त प्रशसित हुआ। यह उपन्यास स्वामीभक्त-देशभक्त राठोड दुर्गादास के जीवन पर आधारित है। विशेषतः सहायक ग्रंथ रहे हैं—राजपूताने का इतिहास (श्री जगदीशसिंह गहलोत) वीर विनोद (श्यामलदास) मारवाड का इतिहास (ओझाजी)। सभा का हृदय से आभारी हूँ।

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

साले की होली

बीकानेर

प्रकाशकीय

'कल्पना प्रकाशन' आपके हाथो मे हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' का प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास 'केसरिया पगडी' प्रस्तुत करते हुए गौरव कर रहा है ।

यह शौर्यपूर्ण गाथा छात्र छात्राओ एव पाठको के चरित्र निर्माण मे सहायक सिद्ध होगी ।

इस प्रकाशन पर मै श्रद्धेय श्री यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' का कृतज्ञ हूँ जो राजस्थान के साहित्य सृजन व प्रकाशन के प्रेरणा स्त्रोत रहे हैं ।

आप सभी के सहयोग का स्नेहाकाक्षी हू ।

कृष्ण जनसेवी

इतिहास की यत्न पूर्वक रक्षा करनी चाहिए । धन तो आता है और चला जाता है । धन से हीन होने पर कोई नष्ट नहीं होता किन्तु इतिहास और अपना प्राचीन गौरव नष्ट कर देने पर विनाश निश्चित है ।

—महाभारत

१

गाव लूणावा ।

श्रावण मास का आगमन । खेतो मे झूले पड गये थे । यौवन की अमराइयो मे तीजो के गीत गुजित होने लगे थे । अमृतमयी वर्षा हो गई थी ।

दुर्गादास खेत मे हल चला रहे थे । उनकी परित्यक्ता माँ अभी-अभी 'भाता' रख कर गयी थी ।

दुर्गा के पिता श्री आसकरण किसी कारण अपनी पत्नी से नाराज हो गये थे । पारिवारिक गृह-कलह इसका मूल कारण थी, इसलिए उन्होने अपनी पत्नी को अपने सभी अधिकारो से वंचित कर दिया था । विवश हो, वह इस ग्राम मे आकर रहने लगी । आखिर थी क्षत्राणी । अपमान नही सह सकी । पति परमेश्वर है यदि वह अपने धर्म पर चले तो ?

समय बीतता गया ।

काल पखेरू के पंख बहुत अधिक मजबूत हो गये । वीर बाप का बेटा भी अत्यन्त वीर निकला । दुर्गादास कठोर श्रम करते थे । माँ की

देख-रेख मे वे शस्त्र-विद्या मे भी पारगत हो रहे थे । कभी कभी मा के व्यथित मुख को देख कर पूछते थे, "मा मा, आप बैठी-बैठी रोने क्यू लगती है ! आप मुझे अपना दुख-दर्द बताइए ! मैं सब दुख दूर कर दूगा ।"

मा उस पीड़ादायक अतीत को कभी भी कुरेदना नही चाहती थी । नितान्त मौन होकर अनेक आश्चर्यजनक वार्ताओ मे दुर्गादास का ध्यान बटा दिया करती थी । किंतु दुर्गादास के अन्तस मे एक पीड़ा की लहर सी उठती थी । वे एकान्त मे बैठ कर सोचा करते थे कि अवश्य कोई गभीर बात है जिसे मा सा उसे बताना नही चाहती ।

दुर्गादास वही पर शिक्षा ग्रहण करते थे । उनकी मा विदुषी थी । वह सदा उन्हे शौर्य पूर्ण गाथाए और स्वामीभक्ति के दृष्टान्त पूर्ण सच्ची कथाए सुनाया करती थी । दुर्गादास अपनी मा को वक्ष फूला कर कहते थे, "मा सा ! आपका पुत्र एक दिन स्वामीभक्ति का वह उदाहरण प्रस्तुत करेगा कि सब आपके नाम को धन्य-धन्य करेंगे । आपकी कोख को सराहेगे ।"

दुर्गादास की मा अपने बेटे के दृढ निश्चय और धार्मिक आचरण पर मुग्ध थी ।

खेत मे हल चला कर दुर्गादास झोपडी मे आकर विश्राम करने लगे । झोपडी मे जल की एक मटकी रखी हुई थी और एक तलवार भी । तलवार हर घडी साथ रखने की दुर्गादास की आदत थी । वीरो का शृंगार ही शस्त्र होना है ।

वे अब भोजन कर चुके थे । उनकी बडी-बडी आखो मे नीद समाने लगी थी । वे खाट पर जरा से आडे हो गये ।

अप्रत्याशित उन्हे धूल उडती हुई दृष्टिगोचर हुई । वे उठे । एक राइका उनकी साडनी खोल कर ले जा रहा था । दुर्गादास ने वहीं से

गभीर गर्जना की, "कौन है ? ... मैं पूछता हूं कि कौन मेरी साटनी को खोल रहा है ?" दुर्गादास उसके समीप आ गये ।

"मैं जोधपुर नरेश का राइका हूं ।"

"मेरी साडनी क्यों खोल रहे हो ?"

उस व्यक्ति ने कोई उत्तर नही दिया ।

'तुम गूंगे हो क्या ?"

अब राइके ने आग्नेय दृष्टि से दुर्गादास की ओर देखा । उन्हे झिटकता हुआ बोला, "बक बक क्यों करता है । अधिक चू-चपड की तो जान से हाथ धोना पड़ेगा ।"

दुर्गादास के नेत्रो मे रक्तिम डोरे उतर आये । उन्होने उसकी गर्दन पकड कर कहा, "मुझे किसी 'गोली' का जाया समझ रखा है । एक लात दे दूंगा तो जीभ बाहर आ जायगी ।"

राइके ने दुर्गादास को धक्का देकर कहा, "जा गोली के जाये, अन्नदाता के राइके के मुंह लगता है । भाग यहा से ।"

दुर्गादास को किंचित आश्चर्य भी हुआ । वे शीघ्रता से कदम उठाते हुए झोपडी मे गये और वहा से नंगी तलवार लेकर बाहर निकले ।

राइका भी पहले से ही तत्पर हो गया था । उसने अपनी कमर मे लगायी कटार को बाहर निकाला । दुर्गादास पर दूर से वार किया । दुर्गादास ने वह वार बचा लिया । फिर क्षुधित व्याघ्र की भांति राइक पर टूट पडे । उन्होने पलक झपकते राइके के टुकडे-टुकडे कर दिये ।

इस हत्या का समाचार जोधपुर पहुँचा । महाराजा यशवंतसिंह जी ने तुरन्त सिपाहियो को आदेश देकर दुर्गादास को दरबार मे

बुलाया। महाराजा ने पर्यवेक्षण दृष्टि से दुर्गादास को देखा फिर पूछा, "तुम्हारा नाम ?"

"दुर्गादास।"

"जाति ?"

"राठोड।"

"बाप का नाम ?"

"श्री आसकरण राठोड।"

"कहा काम करते हो ?"

"अन्नदाता, आपके हुजूर मे।"

"अपने बाप को पहचानते हो ?"

"नही महाराजा, मैं बचपन से उनसे अलग हू। यह मेरा दुर्भाग्य है।"

उन्होने तुरन्त दुर्गादास के पिता आसकरण जी को तलब किया। उनके हलके लाल रग का अगरखा और घुटने तक की धोती बधी हुई थी। सिर पर लाल रग का साफा बधा था। बडी-बडी मूंछे और कानो के नीचे तक की कटी जुल्फे। पाओ मे कशीदकारी युक्त जूती।

"दुर्गादास!" महाराजा ने सिहासन पर बैठे-बैठे ही कहा, "तुम इन्हे पहचानते हो ?"

"नही महाराज।"

"यही तुम्हारे पिता जी है।"

दुर्गादास ने पहली बार अपने श्रद्धेय पिता के दर्शन किये। स्नेह से वे विह्वल होकर अपने पिता को देखते रहे। उनकी आखे भर आयी। उन्होने अपने पिता के चरण-स्पर्श किये। फिर वे विगलित

स्वर मे बोले, "महाराज, आज का दिन मेरे जीवन का महान दिन है क्योकि मैने अपने पिता श्री के दर्शन कर लिये है । अब आपका न्याय मुझे मृत्यु दड भी दे देगा तो मुझे कोई दुख नही होगा ।"

आसकरण जी रुष्ट से अचल खडे थे । उन्होने दुर्गादास को किसी तरह का आशीर्वाद नही दिया । महाराजा के समीप खडे थे— उनके चन्द विश्वासी सरदार ।

महाराजा ने आसकरण जी से पूछा, "आप तो कहते थे कि मेरे दुर्गादास नाम का कोई पुत्र है ही नही ।"

आसकरण जी चन्द क्षण मौन रहे । फिर बोले, "कपूत पुत्र से निसतान कहलाना उत्तम रहता है ।"

महाराजा कदाचित आसकरण की रुष्टता मे छिपे मर्म को समझ गए थे अत प्रसग को बदलते हुए बोले, "तुमने राइके की हत्या क्यो की ?"

दुर्गादास ने अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से इस प्रश्न का यू उत्तर दिया, "महाराज, यह राइका गद्दार था । इसने आपके मान-मर्यादा पर कीचड उछालते हुए आपके राजमहलो को "धोला ढूढा" कहा । वह कोई शत्रु दल का गुप्तचर सा मुझे प्रतीत हुआ अन्यथा वह महाराज की कीर्ति के विरुद्ध एक शब्द भी नही कहता । महाराज, उसने आपकी निंदा की और मैने क्रोध व आवेश मे उसकी गर्दन धड से अलग करदी ।"

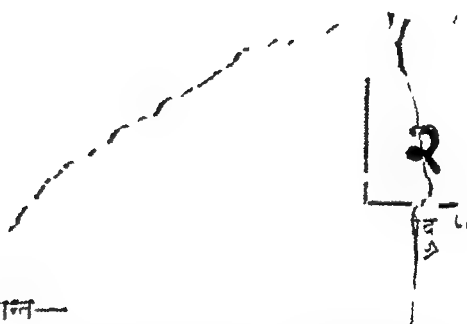
महाराजा उनके उत्तर से बडे प्रसन्न हुए ।

उन्होने आसकरण जी की ओर उन्मुख होकर कहा, "आपके पुत्र के तन मे आपका रक्त बोल रहा है । उसके मन मे आपकी भावनाए व स्वामीभक्ति झलक रही है । आज से ही हम इसे अपनी सेवा मे लेते है । क्योकि जो व्यक्ति अपने राजा के समक्ष पहली बार

निडरता से बोल लेता है वह अवश्य ही आगे चल कर कोई विशिष्ट व्यक्ति होता है। एक दिन यह वीर युवक अपनी वीरता, धीरता और स्वामी भक्ति से समस्त मारवाड का गौरव अक्षुण रखेगा। इसकी स्वाधीनता की रक्षा करेगा और राठोडो की शक्ति को संगठित करने मे अपने सुख चैन को भूल जायेगा।"

दुर्गादास ने महाराजा की जयकार की।

और समय तीव्र गति से धावित होता गया।



कुछ वर्ष उपरान्त—

विजय श्री मुकुट पहन कर मारवाड नरेश यशवन्तसिंह जी और राजनीति, न्याय, युद्ध-विद्या, धर्मशास्त्र और श्रेष्ठ स्वामिभक्त सेनापति वीर राठोड दुर्गादास जब मारवाड पधारे तो हर्ष की ध्वनि ने दिग्दिगन्त को गुंजित कर दिया।

प्रयाग के समीप कुजवा नामक ग्राम के सन्निकट शुजा और औरंगजेब के मध्य भीषण युद्ध हुआ था। यशवन्तसिंह जी औरंगजेब

के विरुद्ध थे। इस युद्ध में उन्हें अपार धनराशि प्राप्त हुई और वीर दुर्गादास के अवर्णनीय युद्ध कौशल ने महाराजा की यशोगाथा को घर-घर फैला दिया।

नगर-प्रवेश सिन्दूरी साँझ के समय हुआ। नील निलय उस दिन नितान्त कपोती पख सा निर्मल था। कोई भी मेघ-खंड नहीं। पर्वत के पीछे से तिमिर का आवरण शनैः शनैः गगन को आच्छादित करने लगा था। क्षितिज के अरुणिम अधर वृद्धा के ओष्ठों की भांति कालिमा ग्रहण करने लग गये थे। नगर भी तिमिर में डूबने को आतुर था। पक्षी पखेरू अपने अपने निविडों की ओर प्रस्थान कर चुके थे।

प्रजा पंक्ति बद्ध खड़ी हुई झुक झुक कर महाराजा का जय घोष कर रही थी। पुष्प वर्षा कर रही थी।

हाथी की सवारी पर महाराजा विराजमान थे। उनके पीछे तरुणाई के सागर में जिनका अंग-अंग उद्वेलित हो रहा हो, वे महाबली सेनापति दुर्गादास श्वेत सिन्धी अश्व पर आरूढ़ थे। घुटनों के नीचे तक मलमल की अचकन! बूटीदार पाजामा! पगड़ी जिसमें स्वर्ण घोटे का काम! स्वर्णकर्ण फूल! गले में कंठ हार! कमर में दो तलवारें। कमर के चारों ओर लिपटे दुपट्टे में एक कटार! एक हाथ में भाला और ओजस्वी मुख मंडल!

घर-घर दीपक प्रज्वल्लित हो गये थे।

राठौड़ दुर्गादास महाराजा के पीछे-पीछे थे और उनके पीछे अनेक सामन्त, उमराव और सरदार!

गढ प्रवेश पर उन सब वीरों की आरती उतारी गयी। मेवाड़ी राणी ने जब महाराजा से इस श्रेष्ठ विजय के बारे में पूछा तब महा-राजा ने श्रद्धाभिभूत स्वर में कहा, "हम कुछ भी नहीं हैं राणी सा! हमेशा मारवाड़ के धूल धूसरित होते हुए गौरव की रक्षा उसके वीर

और स्वामीभक्त सरदारो ने ही की है । इस बार भी हमारे गौरव, मान-मर्यादा और आन की प्रतीक इस केसरिया पगडी की श्री वृद्धि राठोड दुर्गादास ने ही की है । यह मारवाड उनका सदा कृतज्ञ रहेगा । उनके रोम-रोम मे देशभक्ति और कृतज्ञता भरी हुई है ।"

राणी सा ने देखा—महाराजा अपने आप मे विस्मृत हो गये है । उनकी मुख श्री एक अलौकिक ओज से दीप्त हो उठी है ।

३

मत्रणा-कक्ष मे यसवन्तसिंह जी और वीरवर राठोड दुर्गादास गभीर मत्रणा कर रहे थे। कक्ष के गवाक्षो पर मखमल के सलमे-सितारो से जडे पर्दे लटक रहे थे । चतुर्दिक मौन छाया था ।

महाराजा मद्धम स्वर मे बोले, "अब क्या होगा दुर्गादास जी ? औरगजेब के भाग्य ने उसका बहुत बडा साथ दिया है । वह अब हम लोगो से प्रतिशोध लिये बिना नही रहेगा ।"

दुर्गादास के होठो पर एक फीकी मुसकान थिरक हो गयी । बोले, "आलमगीर अत्यन्त ही कुशाग्र बुद्धि वाला है । वह शक्ति से

अधिक कौशल को पहचानना देता है । यह राजनीति को एक खेल समझता है । हर चाल चलने के पहले वह खूब सोचता-समझता है । फिर भी हमें यह भली भांति समझ लेना चाहिए कि उस पर इतना विश्वास करना सदा घातक होगा । राजसी ठाठ, प्रचुर वैभव, मान-सम्मान और ऊंचा ओहदा ये सब इसीलिए है कि वह हमारी संगठित शक्ति के समक्ष अपने को निर्बल समझता है ।"

"मुझे उसने काबुल के 'जमन्द' नामक थाने पर नियुक्त किया है । मुझे सपरिवार वहां जाना है । मैं सिर्फ युवराज पृथ्वीसिंह को यहां पर छोड़ कर जाऊंगा । किन्तु दुर्गादास जी, हमें यह नहीं विस्मृत करना चाहिए कि औरंगजेब हमसे प्रतिशोध नहीं लेगा ? वह नितान्त बहुरूपिया है । उसके हृदय में समस्त हिन्दू जाति के प्रति घृणा है । वह इस जाति के गौरव को समूल मिटाना चाहता है ।"

महाराजा चिन्तातुर हो गये । वे स्वयं में विस्मृत हो कालीन आच्छन्न फर्श पर चहल कदमी करने लगे । दुर्गादास राठोड़ उनके चिन्तातुर आनन को देख रहे थे । देखते-देखते वे भी बोले, "आप निश्चिन्त रहिए । मैं भी आपके संग जमन्द के थाने चलूंगा ।"

"वहां मैं अपने चुने हुए योद्धाओं को भी साथ रखूंगा । यह मैंने पहले से ही निश्चय कर लिया है ।"

"फिर कब प्रस्थान किया जावेगा ?"

"शीघ्र ही ।"

दुर्गादास ने महाराजा से आज्ञा ली ।

अपनी हवेली में आकर वे श्रान्त से पलंग पर पड़ गये । सोचने लगे— महाराज उसका कितना आदर करते हैं । उसकी बात का कितना विश्वास करते हैं । उसे कितना वीर और स्वामीभक्त मानते हैं । और एक ये उसके पिता !

जिन्होने उसकी मा को अपनी पत्नी और उसे अपना पुत्र नही कहा।
मा सा पिताजी की स्मृति मे झुर झुर पिंजर हो गयी थी। और उसने भी जीवन मे पिता का दुलार नही पाया। क्यो उसके पिता जी उससे घृणा करते थे ? क्यो उसे अपना पुत्र घोषित नही करते थे ? प्रश्न पर प्रश्न उनके मस्तिष्क में झझा के समान उठा करते थे। वे पीडा से उद्वेलित हो जाते थे। मन के कोने मे एक आक्रोश उत्पन्न होता था और वे रोष से मन से ही मन आर्तनाद कर उठते थे। उनका मन अन्तर्द्वन्द्व कभी कभी इतना तीव्र हो जाता था कि उनके विशाल नेत्रो मे करुणा का सागर उमड पडता था। पलक–पुलिन गीले हो जाते थे और उन्हे लगता था कि उनके पिता ने उनके साथ न्याय नही किया।

दुर्गादास आन्तरिक सघर्ष मे निस्पद से पडे रहे। मखमली शय्या पर आच्छादित चादर मे सल पड गये।

बादी की पदचाप सुनकर वे चौंके। मलमल के कुर्ते की बाह से उन्होने अपने अश्रुओ को पोछा।

"अन्नदाता ! धनजी पूछ रहे हैं, रवानगी मे हथियारो का सन्दूक भी जायेगा क्या ?"

दुर्गादास बोले, "वाह ! वह क्यो नही जायेगा ? वही तो वीरो की असली वस्तु है। तलवार के बिना वीर वीर ही नही लगता।"

और जोधपुर के सुरम्य भू भाग को छोड कर कल दुर्गादास महाराजा जसवन्तसिंह के साथ काबुल के जमरुद थाने चले जायेंगे। दूर-सुदूर उन मौन पर्वतो की घाटियो के अलौकिक सौन्दर्य छटा वाले स्वर्गीय केन्द्र को। जहा भास्कर की स्वर्णिम प्रखर रश्मिया हिमानी शृ ग–श्रेणियो को स्पर्श करेगी। जहा का प्रभात एक प्रशात मौन को

अक मे वसाये रहेगा ।

दुर्गादास आत्मविस्मृत हो गये । गवाक्ष की राह से शुष्क और शात अपने प्रात को देखते रहे जिसके कण-कण मे शौर्य, प्रेम और भक्ति भरी हुई थी ।

क्षितिज के अधर जब साझ की अरुणिमा से रक्तिम होकर धु धले पडने लगे तब दुर्गादास मदिर की ओर चल पडे

४

अभी-अभी महाराजा मदिर मे अर्चना-वन्दना करके उठे ही थे । अटक के पार आततायियो को महाराजा ने अपने रण-कौशल, वीरता एव आत्म विश्वास से शात कर दिया था । समस्त विद्रोह और छोटे-मोटे झगडे समाप्त हो गये थे । तब आलमगीर ने उन्हे प्रशसात्मक एक फरमान लिखा था—हम आपकी वफादारी और बहादुरी से बडे खुश हैं । ' आपके शहजादे श्री पृथ्वीसिह को हम खास दरबार मे खिलअत पेश करेगे ।"

महाराजा ने सोचा कि औरगजेब अपनी कट्टरता, धार्मिक

अवता और अहिष्णुता का परित्याग कर रहा है । उन्होंने भी बादशाह को एक आभार पूर्ण पत्र लिखा । उस पत्र में उन्होंने स्पष्ट इस बात का उल्लेख किया था कि बादशाह और खुदा को हर इनसान के साथ एक सा व्यवहार करना चाहिए ।"

महाराजा पूजा से निवृत्त होकर वे नरू की महाराणी के कक्ष में गये । उनके साथ उनकी दूसरी राणी जादमण भी थी ।

महाराणी ने चरण-स्पर्श करके अपने पति का स्वागत किया । बोली, "महाराज, बडे कुवर सा का इधर कोई समाचार नही आया है ।"

"राणी सा, उन्हे बादशाह सलामत ने खिलअत बख्शी है । कुवर हमारी तरह ही वीर और तेजस्वी है । वह अवश्य अपना नाम उज्ज्वल करेगा ।"

"ईश्वर उन्हे चिरायु रखे ।" दोनो राणियो ने एक साथ प्रभु से प्रार्थना की ।

तभी राठोड दुर्गादास ने अपने आगमन की सूचना महाराजा को दी । बादी ने जब सिर झुका कर दुर्गादास के आने के समाचार रावले मे आकर दिये तब महाराजा किंचित विस्मित हो गये । स्वत ही बोले, "आज असमय राठोड कैसे पधारे ?" फिर सत्वरता से बैठकखाने में आये ।

दुर्गादास नत-मस्तक किये हुए खडे थे । उनकी मुख श्री विलीन हो गयी थी । प्रतीत हो रहा था कि वे कई दिनो से रुग्ण है ।

"क्या बात है दुर्गादास जी ?" महाराजा ने गभीर स्वर मे पूछा । उनकी दृष्टि दुर्गादास जी के मुख पर जमी हुई थी ।

दुर्गादास ने कुछ कहने के लिए अपने होठ खोले पर वे कुछ

कह नही पाये । व्यथा और गहरी हो गयी-उनकी आकृति की ।

"क्या बात है ! आप चुप क्यों है ? दुर्गादास जी, आप इस तरह 'मून' धारे खड़े रहेंगे तो हमारा जिय जाता रहेगा । हम बेचैन हो जायेंगे ।"

"महाराज । बहुत ही बुरा समाचार है । कहते हुए कलेजा मुंह को आता है ।" उनका स्वर टूट गया ।

"बुरा समाचार ? जोधाणे के हाल चाल तो ठीक है न ? वहाँ तो सब कुशल मगल है ।"

दुर्गादास के नेत्र गीले हो गये । अवरुद्ध कठ-स्वर मे वे धीरे-धीरे बोले, "महाराज ! युवराज पृथ्वीसिंह जी अब इस ससार मे नही रहे । औरगजेब ने उन्हे छल-प्रपच मे मरवा दिया ।"

पता नही, महाराजा ने दुर्गादास के पूरे बोल सुने या नही पर महाराजा अचेत हो गये । दुर्गादास ने नौकरो को पुकारा । देखते-देखते यह दुखद समाचार सर्वत्र फैल गया । डेरे मे हाहाकार मच गया । महाराजा का वैद्य जी उपचार करने लगे । शोक से बोझिल प्रत्येक सामन्त-सरदारो की आखे भरी थी ।

दुर्गादास ने विस्तृत रूप से बताया, "मुझे गुप्तरूप से यह विदित हुआ है कि बादशाह ने युवराज को दरबार मे सम्मान पूर्वक बुलाया । उनके साथ श्रेष्ठ व्यवहार भी किया । खिलअत भी पहनायी । उस खिलअत मे विष का प्रभाव डाला गया । घर पहुँचते-पहुँचते विष ने पृथ्वीसिंह जी पर अपना प्रभाव किया। फिर युवराज ने तडप-तडप कर दम तोड दिया । मैंने महाराज को पहले ही निवेदन कर दिया था कि बादशाह आलमगीर अपनी धार्मिक कट्टरता और हृदय की निर्दयता का त्याग नही कर सकता । उसके सस्कारो मे पर-पीडक वृत्ति बसी हुई है ।"

सभी सरदारो को सावधान रहने को कह दिया गया तथा जोधपुर व लो को भी सावधान रहने के आदेश दे दिये गये ।

महाराजा की दशा मे कोई सुधार नही हुआ । जो योद्धा विशाल समर–प्रागण मे शत्रु-दल भजन करता था। आहतो की चीत्कारो और रक्त-नदो के मध्य सिह गर्जना करता था, वह अपने पुत्र के असामयिक निधन से विह्वल हो गया, चूर चूर हो गया । वे किंकर्तव्यविमूढ से शय्या पर पडे रहते थे । आत्मलीन से से कहते थे, "मेरा बेटा पृथ्वी आया ! पृथ्वी !"

उनके नेत्रो मे अश्रु मेघ बरस उटते थे । उनकी दयनीय दशा देखकर समस्त सरदारो के पाषाण हृदय पसीज उठने थे । वे महाराजा को धैर्य देते, समझाते और प्रतिशोध लेने की प्रतिज्ञाए करते पर महाराजा को चैन कहा ? असीम अवसाद से आवृत उनका मुख पीला और पीला हो रहा था । वे दिन प्रतिदिन कृशकाय हो रहे थे ।

दुर्गादास ने एक दिन सभी सरदारो को सम्बोधित करके कहा, "महाराज पुत्र-शोक को नही सह पाये है । ईश्वर अशुभ न करे पर होनी को कोई नही टाल सकता। ऐसी विषम परिस्थिति मे हमे प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि मारवाड कुल मार्तण्ड के ओज और तेज की हम प्राणप्रण से रक्षा करेगे तथा महाराज के प्रति स्वामीभक्त रहेगे ।

दुर्गादास ने अपने सिर की केसरिया पगडी को सभी सरदारो के बीच मे रखकर कहा, "यह पगडी हमे सदा अपना गौरव और अपनी भक्ति को याद दिलाती रहेगी । हम अपने महाराज के प्रति अपने कर्तव्य और धर्म को विस्मृत नही करेगे । उनके लिए सर्वस्व उत्सर्ग कर देगे ।"

सरदारो ने भी प्रतिज्ञा की, "अपनी जन्मभूमि के गौरव की रक्षा के लिए हम बडे से बडा त्याग करेगे । बडी से बडी आहुति देगे ।"

× × ×

५

रोग शय्या पर कई दिनो के पश्चात महाराजा यशवन्तसिंह जी का देहान्त हो गया । मरने के चन्द क्षण पूर्व भी वे अपने पुत्र को स्मरण कर रहे थे । उनके मुह मे अस्फुट शब्द निकलते थे-पृथ्वी, मेरे पृथ्वी ! और विषाद से वे घिर जाते थे । अंतिम सास भी पृथ्वी शब्द के साथ टूटी ।

शोक की छाया प्रत्येक सरदार पर छा गयी । राणियाँ सती होने के लिए आग्रह करने लगी । सभी सरदारो के परामर्श के पश्चात राठोड दुर्गादास राणी नरु की और जादमण के पास गये । करुण क्रन्दन से सारा वातावरण तिरोहित था । उधर अन्य लोग 'वैकुण्ठी' तैयार करने मे लगे हुए थे ।

'काला' ओढे हुए दोनो राणिया सिसक रही थी । राठोड और उनके बीच मे एक आवरण पडा था ।

दुर्गादास ने श्रद्धाभिभूत विगलित स्वर मे कहा, "राणी सा,

होनी को कौन मिटा सकता है ! यह दुख आज हम लोगो के भाग्य मे लिखा था, इसलिए मिल गया । अब आप धैर्य और विवेक से काम ले तथा सती होने के पवित्र कर्म का परित्याग कर दे ।"

"यह सभव नही है राठोड श्री ! पत्नी का इस कर्म से हटकर कही भी उद्धार नही । इहलोक, परलोक और सब जन्म बिगड जाते हैं। राठोड श्री ! हमे इस पवित्र कार्य के लिए मत रोकिए ।"

"इस पुनीत कार्य के लिए किसी को रोकना अपने आपको पाप का भागी बनाना है राणी सा, किंतु हमे आपकी वृद्धा दासी सा से पता चला है कि आप दोनो दो जीवो से है । इस क्षण तक मारवाड के उत्तराधिकारी की आशाए धूल धूसरित हो गयी है । आप दोनो ही अब इस कुल के वश-सूर्य की रक्षा कर सकती है । आप अपने लिए नही, समस्त मारवाड भूमि के लिए, इस राठोड राजवश के लिए अपने इस अडिग निर्णय को बदलिए तथा धैर्य से विचार कीजिए ।"

"नही–नही, हमे मत रोकिए ।"

"ऐसा यदि आप कहेगी तो हमारी समस्या का समाधान कौन करेगा ? मुगल शासन हिन्दुओ की एकता,धर्म और सत्ता को इस भारत भूमि से मिटाना चाहता है। ऐसी विकट स्थिति मे आप मारवाड के सिंहासन के उत्तराधिकारी की आशा को मिटा देगी तो मारवाड पर मुगलो का झडा फहर जायेगा । औरगजेब हिन्दुओ के मन्दिरो को मस्जिद, तीर्थों को आरामगाह और नगरो को वीरानो मे बदल देगा । हम सभी सरदार आपसे प्रार्थना करते है कि ऐसे सकटकाल मे आप अपना निर्णय बदल दे ।"

राणियाँ बहुत देर तक नही मानी । अत मे सरदारो के निरन्तर अनुरोध पर वे मान गयी ।

बारहवे दिन महाराजा का मोसर करके सरदारो ने भविष्य के

कार्यक्रम पर विचार करने के हेतु एक गोष्ठी का आयोजन किया । उसी समय उन्हे यह समाचार मिला कि बादशाह औरंगजेब ने जोधपुर को खालसा कर ताहिरखा को फौजदार, खिदमतगुजारखा को किलेदार, शेर अनवर को अमीन और अब्दुरहीम को कोतवाल बना कर जोधपुर भेज दिया है । यह बहुत ही अशुभ समाचार था ।

राठोड दुर्गादास ने गभीर स्वर मे कहा," ऐसी विषम स्थिति मे हमे अपने वहाँ के सरदारो को क्या आज्ञाए देनी चाहिए ।"

सरदार सोनिग ने कहा, "हमे किसी तरह का कोई विरोध नही करना चाहिए । क्योकि कुशल राजनीतिज्ञ की भाति बादशाह ने राठोड अमरसिह के पोते रायसिहजी के सुपुत्र इन्द्रसिह को भी दक्षिण से जोधपुर भेज दिया है । वे उन्हे जोधपुर का अधिकार भी दे रहे है । ऐसी स्थिति मे राठोड परस्पर पर रक्तपात करके अपने को दुर्बल ही बनायेंगे । क्योकि आपसी सघर्ष मे जातिया और देश निर्बल हो जाते है ।"

"दुर्गादास की आकृति पर विषाद की रेखाए उभर आयी । वे बोले, ' हम भारतियो ने सदा भारत की एकता, हित और सम्पन्नता का का ध्यान छोड कर एकाई के रूप मे अपने आपको माना है । सघे शक्ति कलियुगे के महामत्र को तज कर हमने सदा आपसी मनमुटाव, द्वेष,प्रतिहिसा,प्रतिशोध,अबधुत्व की परपरा को प्रोत्साहन दिया है। राज्य लिप्सा की भूख हमे सदा पथभ्रष्ट करती आयी है । आज भी हमारी जन्मभूमि पर विपता के बादल मडरा रहे है पर मारवाड के किंचित स्वार्थी सरदार अपनी डफली अपना राग अलाप रहे है । ऐसे समय मे हमे अपने क्षुद्र स्वार्थो की चिता न करके मारवाड के सामूहिक हित की बात करनी चाहिए ।.. मैं समझता हू कि हमे विरोध को एकदम छोड देना चाहिए ? तथा समय की प्रतीक्षा करनी चाहिए । सुअवसर

देखना चाहिए ।

मोनिंग ने कहा, "तब हमें भी शीघ्र ही यहा से प्रस्थान कर देना चाहिए । अब हमारा यहा पर रहना खतरे से खाली नही है । और राणिया गर्भवती हैं, इस बात को नितान्त गुप्त रखा जाय ।"

"क्यो ?" एक सरदार ने प्रश्न किया ।

"इसलिए कि बादशाह राठोड राज वश को मिटा करके, जोधपुर राज्य के उत्तराधिकारी के प्रश्न को ही समाप्त कर उसे अस्तित्वहीन करना चाहता है ।"

राठोड दुर्गादास ने सोनिंग की बात का समर्थन किया, "मोनिंग जी ठीक फरमाते है । बादशाह की नीयत खराब है । हमे पूर्ण सावधानी के साथ यहाँ से प्रस्थान करना चाहिए ।"

"फिर हमारा लश्कर कब प्रस्थान करेगा ?"

"कल प्रातःकाल !"

विचार-विमर्श के पश्चात दुर्गादास व सोनिग बहुत देर तक एकात मे बैठे रहे ।

दुर्गादास ने कहा, "अटक नदी को पार करते हुए बादशाह के सिपाही हमारी रोकथाम अवश्य करेंगे ।"

"इसकी आप चिता न कीजिए । पर हमे जाना गुप्तरूप से ही पडेगा । अचानक वहा पहुँचने पर यदि बादशाह के सिपाही विरोध भी करेंगे तो हम जबरदस्ती अटक को पार कर लेगे । प्यार से नही तो तलवार से ।"

"ऐसा ही करना पडेगा ।"

दुर्गादास ने दृढता से कहा ।

× × ×

६

अटक नदी ।

इसी नदी पर हिन्दुओ की रक्षार्थ बीकानेर नरेश श्री कर्णसिंह ने एक बार कुल्हाडी से उन नावो पर भीषण प्रहार किया था जो हिन्दू नरेशो को उस पार लेजा कर मुसलमान बनाना चाहती थी । इस वीरोचित कार्य के लिए सभी नरेशो ने उन्हे जय जगल धर बादशाह की पदवी से विभूषित किया था । आज उसी नदी के कूल पर यसवन्तसिंह जी का सारा परिवार एकत्रित था ।

मुगल–अधिकारी ने अटक पार करने की सनद मागी । दुर्गादास ने टाल–मटोल की । अधिकारी को समझाया कि सनद अभी तक नही पहुँची है । हमे जरूरी कार्य से अभी जाना है, ऐसी स्थिति मे हम रुक नही सकते ।"

"बिना सनद मैं आपको पार नही जाने दूगा ।"

"जैसी आपकी मर्जी !" कह कर दुर्गादास ने अपने साथ के जोधा रणछोड को सकेत किया । सकेत पाकर जोधा ने एक ही वार मे अधिकारी के दो टुकडे कर दिये । क्षणिक लडाई के उपरान्त दुर्गादास

ने मय राणियो के अटक पार की ।

लाहोर की एक अज्ञात हवेली मे जोधपुर के वीर लोगो ने अपना डेरा जमाया । राणियो की स्थिति अत्यन्त गभीर हो गयी थी। यात्रा करना अब उनके लिए दुसाध्य सा हो रहा था । सभी सरदारो ने यह निश्चय किया कि जब तक बच्चे न हो जाय तब तक यही रहा जाय ।

दुर्गादास ने राणी जी से जाकर अर्ज की, 'हम सब अब यही रहेगे और ईश्वर से सदा प्रार्थना करेगे कि हमारे यहा 'सोवन थाल' ही बजे ।"

राणी जी ने भीतर से फरमाया, "यहाँ कोई विशेष खतरा तो नही है ।"

"नही है राणी मा !" राठोड ने आश्वस्त होकर कहा, "पहली बात यह है कि हम यहा अज्ञातवास की स्थिति मे है । दूसरे यहा हम जिस ढग से रह रहे हैं, उससे हम एक सैनिक अधिकारी के अतिरिक्त कुछ भी नही लगते । राजाओ के समस्त चिन्ह मिटा दिये गय है ।"

"आप जैसा उचित समझे वैसा करे ।" जादमण ने कहा ।

राठोड दुर्गादास को इधर गहरा आत्म सतोष प्राप्त होता था । वे सोचते रहते थे कि उनकी महत्ता सभी सरदारो से अधिक हैं । उनकी स्वामीभक्ति का प्रत्येक सरदार और दोनो राणियो को अगाढ विश्वास है ।

विक्रम सवत १७३५ चैत वदी ४ को दोनो राणियो से क्रमश. अजीतसिह और दलथभन का जन्म हुआ ।

राठोड के मन प्रसन्नता की लहर दोड गयी । वे हवेली के एक गवाक्ष मे खडे हुए सोच रहे थे, "मैंने अपने जीवन के ४० वर्ष जोधाणे के धणी की चाकरी मे व्यतीत कर दिये । अपना निजी सुख

और आनद मैने देखा ही नही । कदाचित अनेक ऐसे भी लोग इस पृथ्वी पर जन्म लेते है जिन्हे पारिवारिक सुख नही मिलता।"

नभ मडल मे घन-खड विचित्र रूपो मे तैर रहे थे । पवन बह रही थी । सडक पर विभिन्न यात्री आ-जा रहे थे ।

दुर्गादास को आज अपनी पत्नी और पुत्र स्मरण हो उठे । महाराजा की सेवा मे उन्होने यदा-कदा ही अपनी पत्नी और पुत्रो से भेट की । केवल युद्ध ! केवल महाराजा की आज्ञा का पालन !

और उन्हे सहसा महाराजा के वे शब्द स्मरण हो उठे जो उन्होने दरबार मे पहली बार कहे थे । दरबार के साथ ही उन्हे अपने पिता श्री स्मरण हो उठे । पिता श्री की स्मृति के साथ एक कडवापन उनके होठो पर उत्पन्न हो गया । कही मन गह्वर मे उपेक्षित दुर्गादास को अपने पिता से कदाचित घृणा हो । लेकिन ज्योही घृणा की भावना गहरी होकर उनकी चेतना पर आच्छादित होती त्योही वे अपने आपको धिक्कारते और ईश्वर मे क्षमायाचना करते ।

कुछ दिन व्यतीत हो गये ।

एक दिन मारवाड के एक राठोड सरदार ने आकर बताया, "बादशाह को दोनो कुवरो के जन्म के समाचार मिल गये है । वे फाल्गुन वदी ७ को अजमेर की ओर गये है । उन्होने खानजहाँ बहादुर और हुसेनअली खा को सेना सहित जोधपुर राज्य पर अधिकार करने की आज्ञा देदी हैं ।"

सरदार सोनिग ने कहा, "मैं पहले ही जानता था दुर्गादास जी कि बादशाह की नीयत ठीक नही है । वे जोधपुर को किसी तरह हडपना चाहते हैं ।"

दुर्गादास ने तलवार हाथ मे लेकर सौगन्ध खायी, "जब तक राठोडो के रक्त मे शौर्य है, हम जोधपुर के राज्य की एक एक ईट के लिए लडेंगे ।"

"पर दुर्गादास जी अब हमे यहाँ से जितना जल्दी हो सके प्रस्थान कर देना चाहिए । बादशाह कोई न कोई षडयंत्र किये बिना नही रहेगा ।"

"हम आज ही यहा से प्रस्थान करेंगे ।"

और दुर्गादास के निरीक्षण मे राणियो तथा कुवरो का लश्कर चल पडा । बैलगाडिया, रथ, घोडे और पैदल सैनिक ! सभी शस्त्रो से सज्जित ! धीमी गति ! दुर्गादास सबसे आगे अश्वारूढ ! तूती बाग, राजा का तालाब, फतियाबाद, और अंत मे वे सतलज के किनारे पहुँच गये ।

सतलज को पार करने मे उन्हे बडी कठिनता का सामना करना पडा । अच्छी नावे न होने के कारण राणियो ने पार करते हुए अनेक यंत्रणाए सही । बाद मे गाव लेधाणा मे उन्होने डेरा डाला ।

तम्बू तन गये थे । श्रांत सरदार अपने-अपने तम्बू मे भोजनादि से निवृत होकर सो गये थे । मध्याह्न का समय ! चतुर्दिक शांति और मौन ! एक सिपाही दूर-दूर तक देखता हुआ पहरा लगा रहा था ।

अप्रत्याशित उसके कर्ण-कुहरो मे घोडे की टापे सुनायी पडी । वह सजग हो गया । जब टापे क्रमश समीप आती गयी तब उसने सभी सरदारो को सावधान कर दिया । सारे सरदार तलवारे लेकर बाहर आ गये ।

दो घुडसवार थे । उन्होने शाही सेना के लिबास पहन रखे थे । दुर्गादास भी आ गये थे । सवार समीप आकर उतर गये । उन्होने कोर्निश होकर निवेदन किया, "हम शहंशाहे आलमगीर के कासीद (पत्रवाहक) है । बादशाह सलामत ने आपको एक फरमान भेजा है ।"

राठोड दुर्गादास ने उस फरमान को खोल कर पढा । उसमे लिखा था कि हम महाराजा के पुत्रो के जन्म मे बहुत ही खुश हुए है ।

महाराजा यशवन्तसिंह ने मुगलिया सल्तनत की बडी खिदमत की है। हम स्वय भी दिल्ली पहुँच रहे हैं। हमारी दिली ख्वाहिश है कि हम उन पुत्रो को मनसब आदि देकर उनका रुतबा दरबार मे बढावें।

सवारो का उचित सम्मान करके उन्हे वापस भेज दिया गया और दुर्गादास ने बादशाह को कहला दिया कि हम शीघ्र ही दिल्ली पहुँच रहे हैं। किंतु दुर्गादास ने अपनी प्रखर प्रज्ञा के कारण जोधपुर के प्रमुख सरदारो को पहले ही दिल्ली बुला लिया और उन्हे बादशाह से मिलने के लिए अनुरोध किया। अत अजमेर से रघुनाथसिंह भाटी व पचोली केशरीसिंह मुगल अधिकारी नौशेर खा के साथ दिल्ली रवाना हुए।

इधर दुर्गादास ने अपने समस्त सरदारो से अनुरोध किया, "जब तक हमे दिल्ली की वास्तविक स्थिति की जानकारी न हो जाय तब तक हमे यही रुकना चाहिए। आलमगीर हमारे सरदारो को कई तरह के प्रलोभन देगा पर मुझे विश्वास है कि राठोड राजकीय हितो के अतिरिक्त कोई भी बात नही मानेंगे।"

जब दुर्गादास ने दिल्ली की स्थिति जान ली तब वे दोनो राजकुमारो के साथ दिल्ली आ गये। दिल्ली मे बलू दे के चादावत सरदार मोहकमसिंह की हवेली मे ठहरें।

दुर्गादास को क्षण भर का भी चैन नही। पल-पल राजनैतिक स्थितियाँ बदल रही थी। क्या करे दुर्गादास ? अपने कक्ष मे वे एकान्त को चारो ओर बैठाए हुए थे। आलमगीर की दुष्टता पर वे सोच रहे थे—इन्द्रसिंह को राजा का खिताब, खिलअत, जडाऊ साज की तलवार सोने के साज सहित घोडा हाथी, झडा और नक्कारा देकर राजपूतो की एकता को उसने एक बार पुन भग करने की चाल चली है।

अत्यन्त विषम स्थिति थी। दुर्गादास को यह स्पष्टतया मालूम हो गया था कि बादशाह किसी तरह अजीतसिंह जी को मरवाना चाहता

है। इसलिए दुर्गादास स्वयं ने एक बार औरंगजेब से मिलने की चेष्टा की।

बादशाह ने उसका प्रस्ताव शीघ्र ही स्वीकार कर लिया। दुर्गादास के साथ चापावत सोनिंग भी था। बादशाह उस समय दीवान-खास मे थे।

जब राठोडो ने दरबार के नियमानुसार दीवान-खास मे प्रवेश किया तब औरंगजेब ने प्रफुल्लित मुख से उन सबका स्वागत किया। उसकी आकृति पर किसी तरह का द्वेष नही झलक रहा था। नितान्त सौम्य और फकीरो की भेष! कोई तडक भडक नही। आलमगीर के सादे भेष ने सबको प्रभावित किया।

आलमगीर ने फरमाया, "हमे आप लोगो को यहा देखकर बडी खुशी हुई है। हम बहादुरो के कद्रदा हैं। और राठोड दुर्गादास की बहादुरी के किस्से हम बहुत सुन चुके हैं। आज हमे उनसे मिलकर बहुत खुशी हुई। कहिए दुर्गादास, आप क्या कहना चाहते है?"

"हम प्रार्थना करने आये है कि जोधपुर का राज्य उसे ही सौपा जाय जो उसका असली हकदार है। · · यदि ऐसा नही हुआ तो जहापनाह को व्यर्थ ही झंझटो मे उलझना पडेगा।"

"हम भी यही चाहते है कि असली हकदार ही जोधपुर का मालिक हो, पर अभी असली हकदार नाबालिग हैं। हम उसे अपनी निगाह के सामने रखकर परवरिश करना चाहते हैं। पता नही आप हम पर यकीन क्यो नही करते?"

सरदार सोनिंग ने कठोर स्वर मे कहा, 'यकीन की बात जाने दीजिए। युवराज पृथ्वीसिंह ··!"

आलमगीर पश्चाताप भरे स्वर मे बोले, "कभी कभी कुदरत इतने अजीबोगरीब खेल खेलती है कि इनसान को ख्वामख्वाह बदनाम होना पडता है। फिर हुकूमत की गदी लडाई मे ऐसे गुनाह लग ही

जाते है । पर यह झूठ है । हमने युवराज के साथ कोई दगा नही किया । वे अपनी मौत मरे हैं । आप हम पर यकीन करें । अगर मानते नही तो हम खुदा पर अपना इन्साफ छोडते हैं ।"

दुर्गादास मन ही मन बोले, "ढोगी कहीं का !"

"आप हमे कुंवर को सिपुर्द करेंगे ?" औरगजेब ने पूछा ।

"क्यो नही ?"

"हम दुर्गादास से तनहाई मे कुछ बात चीत करना चाहते है ।"

सारे सरदार चले गये । बादशाह ने अपने सन्निकट दुर्गादास को बिठाया । बडी आत्मीयता से वह बोला, "हमारी एक दिली ख्वाहिश है कि हम जोधपुर का राज्य आपको देना चाहते है । हम इसके बदले सिर्फ राजकुमार को चाहते हैं ।"

दुर्गादास स्तभित हो गया । फिर उन्होंने कहा, "जहांपनाह ! लोभ पाप का मूल है और पाप आदमी का पतन किये बिना नही रहता । मैं आपको साफ-साफ बताना चाहता हू कि जो व्यक्ति नमक-हरामी करता है, उसे कुत्ते की मौत मरना पडता है । अपने देश और स्वामी के कर्तव्य से च्युत व्यक्ति मैं नहीं हू । देशद्रोह जैसे महा पाप का भागी मैं जीते जी नही बन सकता । फर्ज की जो दीवार मेरे सामने खडी है, उसे आलमपनाह मैं रक्त की आखिरी बूंद तक नही मिटने दूंगा ।"

बादशाह उनके अन्तस के मतव्य को जानकर मुसकराते हुए बोला, "अरे आप इतने गुस्मे मे क्यो भर आये ? हम तो आपका इम्तिहान ले रहे थे । राठोड सरदार ! हम आपकी वफादारी से बडे खुश हुए । आप यकीन रखे हम आपके हक मे ही फैसला करेंगे ।"

राठोड दुर्गादास ने आकर समस्त सरदारो को इस प्रलोभन के बारे मे बताया । हवेली मे रूपसिह, राठोड सूरजमल, चाँपावत उदयसिह, जैतावत प्रतापसिह, राठोड राजसिह, चादावत सरदार मोकमसिह

एकत्रित हुए ।

दुर्गादास ने कहा, "चतुर और दुष्ट राज्याधिकारी सदा कूटनीति का सम्बल लेता है । कूटनीति का सामना कूटनीति से ही किया जाता है । आप यह मान ले कि बादशाह की फौज देर-सबेर यहा आने वाली है । हमे यहा से भागने की तुरन्त चेष्टा करनी चाहिए ।"

"लेकिन हवेली के चारो ओर बादशाह के सिपाही तैनात है । ऐसी स्थिति मे खुले आम निकल कर भाग जाना सभव नही ।"

"फिर ?"

मोहकमसिह ने कहा, "यह समस्या मैं हल करूगा । आप सब भागने की चेष्टा करे ।

फिर मोहकमसिह ने अपनी बाघेली राणी को जाकर यह समस्या बतायी । बाघेली राणी ने महाराजा अजीतसिहजी को अपनी पुत्री घोषित किया और फिर वह उन्हे चतुराई से छिपा कर हवेली से निकल पडी । उनके साथ दुर्गादास दूसरे बच्चे को लेकर भाग निकला ।

बाद मे बादशाह की फौज ने उन्हे घेर लिया । सब राजपूत बादशाह के विध्वशकारी तोप खाने पर टूट पडे । वीरो ने मुगल सेना को रोदना शुरु किया । राणियो ने जब यह देखा तब वे भी अपने जोश को नही रोक सकी । वीरागनाओ की भाति वे पुरुष भेष मे हाथो मे तलवार लेकर बाहर आ गयी ।

युद्धरत सैनिको को देख कर वे भी शत्रु से भिड गयी । अत मे वे युद्ध मे काम आ गयी । एक वीर सैनिक चन्द्रभान ने उन दोनो की लाशो को जमना मे प्रवाहित कर दिया ।

जब बादशाह को यह मालूम पडा कि दुर्गादास दोनो कुवरो को लेकर भाग गया है तब वह पागल की तरह चीख कर बोला, "उस दुर्गादास को मेरे सामने जिंदा या मुर्दा पेश करो । सारे सिपाही स्तब्ध से खडे थे ।

× × ×

७

वादशाह ने अपने सिपाहियो को अजीतसिहजी का पीछा करने के लिए भेजा । दुर्गादास उन्हे लेकर गाव बलू दे चला गया । उन्होने अपने चारण साथी शूजा को जोधपुर भेज दिया । जोधपुर के राठोडो ने जब बादशाह की इस नृशमता के बारे मे सुना तब वे विद्रोही हो गये । उन्होंने जोधपुर पर आक्रमण कर दिया । ताहिरखा की जान पर आ बनी ।

दुर्गादास को जब यह खबर मिली तब वे बहुत ही प्रसन्न हुए । दलथभन की मौत रास्ते मे ही हो गयी थी । दुर्गादास अजीतसिह जी को लेकर यहा से वहा घूमते रहे । न रात को नीद और न दिन को चैन । सिर्फ महाराजा के सुरक्षा हेतु भटकना ।

मोकमसिह ने एक दिन कहा, "दुर्गादास जी, मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मेरे होते हुए महाराजा का कोई बाल बाका नही कर सकेगा ।"

"किंतु ठाकुर सा बलू दा के चारो ओर मुसलमानी शासन है । पता नहीं, कब बादशाह सलामत को इस रहस्य की जानकारी हो जाय और हमारा सारा श्रम व त्याग क्षण भर निष्फल हो जाय ।"

मोहकमसिंह ने उनकी राय मान ली । उसी दिन वे अपने विश्वस्त साथियो के सहित सिरोही की ओर रवाना हो गये । कष्ट और अनेक आपदाओ को झेलते हुए वे सिरोही के महाराव के समक्ष गुप्त रूप से प्रस्तुत हुए ।

महाराव वैरीसाल ने दुर्गादास का हार्दिक स्वागत किया । उन्हे आलिंगन मे आबद्ध करके कहा, "जोधपुर का राज्य कुल आपका सदा कृतज्ञ रहेगा । हमारी तो यह आशा है कि भविष्य मे आप यदि उनके शरीर की चमडी की जूती मे बना कर पहनना चाहेगे तो वे सहर्ष आपकी बात स्वीकार करेंगे ।"

"महाराव, यह मेरा कर्तव्य है । स्वर्गीय महाराजा दुर्गादास जैसे छोटे व्यक्ति पर अत्यधिक भरोसा रखते थे । आज वे हमारे बीच नही है पर जहा कही भी उनकी आत्मा है, वह मुझसे प्रसन्न रहे यही मेरी इच्छा है । मुझे नमकहराम और देशद्रोही न समझे । महाराव जी, आज क्षत्रियो को सगठित होकर मुगल शासन के खिलाफ उठना है । मैं आपके पास बडी आशाए लेकर आया हूँ । आपकी छत्र छाया मे मै अजीतसिंह जी का पालन-पोषण करना चाहता हूँ ।"

महाराव वैरीशाल किंचित आकुल स्वर मे बोले, "कोई बात नही राठोड जी, पर यहा महाराजा अधिक सुरक्षित नही रह सकते । मैं महाराजा को अत्यन्त सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देता हू ।"

"कहा ?"

"कालिंद्री गाव मे ।"

"वहा कौन है ?"

"वहा मेरी भुआ आनदकुवर बाई सा है ।"

"लेकिन वहा महाराजा की सुरक्षा कैसे हो सकती है ?" दुर्गादास ने शका प्रकट की ।

महाराव वैरीशाली ने एक बार इधर-उधर चहलकदमी की ।

गभीर मुसकान अपने होठो पर थिरकाते हुए वे बोले, "कदाचित आपको इसका ज्ञान नही है कि महाराव अखैराज की पुत्री आनदकु वर बाई सा का ब्याह स्वर्गीय महाराजा श्री जसवतसिंह जी के साथ हुआ था। इस रिश्ते से वह महाराजा की मां हुई ।"

दुर्गादास का चेहरा फूल सा खिल उठा। उनके निस्तेज मुख पर सहस्त्र सूरज चमक उठे। वे बोले, "हमे वही भेज दिया जाय! जोधपुर का राजवंश आपका सदा आभारी रहेगा।"

दुर्गादास इधर रात-दिवस अथक यात्री की भांति चले जा रहे थे। उन्हे शका बनी रहती थी कि किसी भी क्षण बालक महाराजा को मृत्यु अपने विकराल पजो मे दबोच सकती है। उनका कोई भी गतव्य नही। कोई ठहराव नही! चैरेवति···चैरेवति! सिर्फ चलना······ सिर्फ चलना!

कालिन्द्री गाव मे जाकार दुर्गादास ने अपना परिचय और वैरीसाल जी का सदेश आनदकु वर बाई सा को देते हुए कहा, "ये महाराज सा आपके कुल-दीपक की बुझती हुई लौ है। अनेक झझाओ से घिरा हुआ यह दीपक है। अब मैं इसे आपकी शरण मे लाया हू। आपके आचल का सम्बल इन्हे अब चाहिए।"

आनदकु वर ने उस फूल से मृदुल और आकर्षक शिशु को गोद मे लेकर चूमा। ममता के पावन चुम्बन वर्षण से आनदकु वर सा की ममता जाग्रत हो गयी। भावतिरेक स्वर मे वह बोली, "इसकी रक्षा मैं करूंगी, यह मेरा लाल है, राठोड जी यह मेरा लाल है!"

उसने तुरन्त अपने विश्वासी पुष्करणा पुरोहित जयदेव को बुलाया।

पुरोहित ने हाथ जोड कर कहा, "क्या हुक्म है बाई सा ?"

"देखो पुरोहित जी, यह कु वर मेरा अपना लाल है। बादशाह औरगजेब की कुदृष्टि इस पर लगी हुई है। मैं चाहती हूँ कि आप इसे

अपने बेटे की तरह पाले । इसके रहस्य का पता किसे भी न चले ।"

"जो हुक्म ! आप निश्चित रहे, मैं अपने जीते जी इन्हे किसी प्रकार की आच नहीं आने दूगा ।"

जयदेव अजीतसिह जी को अपने घर ले गया। वीरवर दुर्गादास वहा छद्मभेष मे रहने लगे। एकात मे वे कभी-कभी अधीर हो जाते थे । उन्हे प्रतीत होता था कि उसका जीवन केवल कर्तव्यो से भाराक्रात हैं । कर्तव्य के अतिरिक्त वे कोई भी उत्तरदायित्व नही निभा पाते है । उनकी पत्नी और उनके पुत्र ! वे कभी-कभी अपने परिवार की मधुर स्मृति मे खोकर विचलित हो जाते थे ।

फिर वे पहरो प्रकृति की गोद मे बसे हुए इस सुरम्य स्थल के अवलोकन मे व्यस्त रहते थे । घाटियो के मौन अचल मे वे भटका करते थे ।

आज वे प्रात काल ही उधर निकल गये ।

सूर्य की ताजा किरणे चोटियो को चूम रही थीं । पवन के शीतल झोके चल रहे थे ।

अप्रत्याशित उन्हे कुछ मुगल सैनिक दृष्टिगोचर हुए । दुर्गादास आकुल हो उठे । सत्वरता से डग भरते हुए वे उन सैनिको के समक्ष गये । सैनिको ने उन्हे सर्वथा किसान समझा । एक सैनिक ने पूछा, "भाई,हम तुम्हे मुहमागा ईनाम देगे अगर हमे एक बात बता दो तो?"

दुर्गादास खिसिया कर बोले, "कौनसी बात सिपाही जी ?"

"यहा महाराजा यशवन्तसिंह जी के कुवर अजीतसिह जी रहते हैं । वे कहा रहते हैं, इसका पता बतादो !"

"मुझे क्या ईनाम मिलेगा ?"

सैनिक का उन्माद बढ गया । वह प्रसन्नता भरे स्वर मे बोला, "हम यह हार देंगे । एक थैली मोहरो की देंगे ।"

दुर्गादास एक पल के लिए उन्हे देखते रहे । फिर बोले, "पहले

मैंने उन्हे इस पहाडी घाटी के उस पार जो सबसे ऊची चोटी दिखलायी पडती है,उस पर सूरज को मु ह मे डालते हुए देखा था और रात को चांद तारो के साथ क्रीडा करते हुए पाया ।''

"क्या बकते हो ?" सैनिक ने डाट बतायी ।

''माई-बाप ठीक कह रहा हू । वह बालक बडा अद्भुत है । आप इसे ऐसे नही पकड सकते । मेरी मानो,एक बडा सा जाल बनवाइए, उसे सारे गाव पर डलवाइए । फिर ।

"यह पागल लगता है ।''

"एकदम पागल, चलो–चले ।''

सैनिक चल पडे ।

दुर्गादास छोटे रास्ते से सीधा आनदकुवर के पास पहुँचे । बोले, राणी सा मुगल सैनिक महाराजा को खोजते हुए यहा आ गये है । मेरा दिल धडक रहा है ।"

''यह अच्छा नही हुआ ।'' शका प्रकट की राणी जी ने ।

"लेकिन कही पुरोहित जी ने प्रलोभन और भय मे आकर कुछ कह दिया तो ?"

''ऐसा नही हो सकता । दुर्गादास जी, जयदेव पुष्करणा ब्राह्मण है । वेद और धर्म का ज्ञाता । उसने हमारा पीढी-दर पीढी नमक खाया है । श्रेष्ठ ब्राह्मण रक्त मे नमकहरामी नही आ सकती । – फिर भी आप वहा जाकर उन्हे सावधान कर दीजिए ।''

दुर्गादास पवन-वेग से उधर भागे । जयदेव को सारी स्थिति से अवगत कराते हुए वे विनीत स्वर मे बोले, "पडित जी, राठोड राज्य कुल गौरव का यह अतिम चिन्ह है । इसकी रक्षा करके आप न केवल मुझ पर ही उपकार करेगे वरन समस्त राठोड जाति पर उपकार करेगे ।''

''राठोड जी, आप किसी प्रकार की चिंता न करें । मैं अपने

प्राण दे दू गा पर महाराजा का एक रोम भी खडित नही होने दू गा ।' उसके स्वर मे दृढता थी ।

उधर मुगल सैनिक एक-एक घर मे जा-जाकर अजीतसिंह जी को खोज रहे थे । बादशाह ने हुक्म जारी कर दिया था कि किसी भी तरह महाराजा और दुर्गादास को हमारे हुजूर मे पेश करो । सैनिक रात-दिन इसी प्रयास मे सलग्न थे ।

सैनिक अत मे पडित के घर आ पहुँचे । द्वार पर दुर्गादास छद्मभेष मे बैठे ही थे । समीप ही पृथ्वी पर उन्होने अपनी तलवार गाड रखी थी ।

"यह किस का घर है ?" सैनिक ने पूछा ।

दुर्गादास बीच मे ही बोल पडे, "जी माई बाप, यह घर मेर है ।"

जयदेव ने उन्हे डाटते हुए कहा, सिपाही जी यह गैला (पागल) है । आप इसकी बात पर जरा भी गौर न कीजिए ।" यह घर मेरा है । मेरा नाम पडित जयदेव है । मैं पुजारी हूँ । पुरोहित हूँ ।"

"तुम्हारे घर मे कितने बच्चे हैं ?"

"दो ।"

"वे कहा है ?"

"भीतर भोजन कर रहे है ।"

"हम उन्हे देखना चाहते हैं ।"

"शौक से देखिए ।"

एक मुगल सैनिक घर के भीतर घुसा उसने देखा कि दो बालक जनेऊ पहने हुए साथ-साथ भोजन कर रहे है ।

सैनिक ने अधिकार पूर्ण स्वर मे पूछा, "ये दोनो बच्चे तुम्हारे हैं, सच-सच कहना ।"

"जी हुजूर ।" अत्यन्त विनम्रता से पुरोहित बोला, "नही-नही,

मेरे नहीं हैं, ये दोनो परम पिता परमात्मा के है । खुदा के हैं ।"

सैनिक जैसे आये थे, वैसे ही चले गये ।

दुर्गादास भावविह्वल होकर पुरोहित के गले मिल गये । बोले, "एक बार एक पुरोहित ने मेवाड की एकता और भाई-भाई के वैमनस्य को मिटाने के लिए अपने वक्ष मे छुरा भोक कर आत्माहुति दी थी । और आज एक पुरोहित ने अपने धर्म की चिंता न करते हुए राठोड कुल के सूर्य को अस्त होने से बचाया है । विप्रवर ! आपकी इस महती कृपा को राठोड कभी नही भूल सकते । राठोड इस पुष्करणा ब्राह्मण के त्याग को स्वर्णाक्षरो मे लिख कर रखेंगे ।

आनदकुवर भी आ गयी थी । उसने आते ही पूछा, "क्या हुआ राठोड जी ?"

"महाराजा की रक्षा हो गयी ।"

जयदेव को धर्मान्धो ने न्यात से बाहर कर दिया । उसने कोई परवाह नही की । अतिथि की रक्षा से न धर्म श्रेष्ठ है और न जाति !

दुर्गादास ने जयदेव की चरण–धूलि को अपने सिर पर लगाया और कहा, "हम लोग आज ही मेवाड जा रहे है । अब यहा रहना खतरे से खाली नही है । मुगल सेना रात-दिन हमारा पीछा कर रही है । आपके हम सदा कृतज्ञ रहेगे । महाराजा की सार-सभाल अब आपको करनी है ।"

जयदेव ने विश्वास पूर्वक कहा, "आप निश्चित रहिए दुर्गादास जी, अपने प्राण रहते हुए मैं महाराजा पर किसी तरह की आच नही आने दूगा । इन पर अपना सर्वस्व बलिदान कर दूगा । आप निश्चित होकर जाइए और स्वतन्त्रता की ज्योति जलाइए ।"

दुर्गादास के जीवन मे फिर वही यात्रा ! चरैवेति ... चरैवेति ...

८

छप्पन पहाड़ में महाराजा राजसिंह जी के परामर्श से राठौड़ वीर दुर्गादास छिप गये। पहाड़ों के बीच उस महान सेनानी ने अत्यन्त कष्टपूर्ण जीवन व्यतीत किया। राणा जी उन्हें निरन्तर सहायता पहुँचाते रहे।

औरंगजेब का पत्र राणा जी को मिला। बादशाह ने एक बार फिर महाराजा और राठौड़ दुर्गादास की मांग की। हिन्दू धर्म प्रिय राणा जी ने औरंगजेब की बात को सुना-अनसुना कर दिया।

इस पर औरंगजेब ने मेवाड़ पर आक्रमण करने की घोषणा कर दी। वीरवर दुर्गादास और सोनिग सरदार ने राणा जी के साथ युद्ध करने के बारे में परामर्श किया। तुरन्त राठौड़ दुर्गादास ने यत्र-तत्र-सर्वत्र बिखरे देशभक्त राठौड़ों को आह्वान किया। सभी वीर तुरन्त एकत्रित हो गये। दुर्गादास ने अपने विचार व्यक्त करते हुए विनम्र शब्दों में कहा, "हम शाही सेना से सीधा युद्ध नहीं कर पायेंगे। उनके पास असंख्य सैनिक व तोपखाना है। विनाशकारी अम्बार है। ऐसी स्थिति में हमें पहाड़ों में छुप कर रहना चाहिए।"

दीर्घकालीन इस बैठक के पश्चात सर्व सम्मति से यह निर्णय

लिया गया कि हम पहाड़ो मे छिप कर लड़ेंगे । राणा जी अपने सरदारो व सैनिको के साथ पहाड़ो मे चले गये । दुर्गादास जी अपने साथी सोनिग के सग मुगल-सेना पर लुक छिप कर आक्रमण करते थे और उनकी रसद लूट कर पुन पहाड़ो मे चले जाते थे ।

उदयपुर पर मुगल-सेना का अधिकार हो गया । उन्होने वहाँ के मदिर तोडे और प्रजा को सताया । फिर शाहजादा अकबर सैन्य सचालन के लिए वहा रह गया । इधर अवसर मिलते ही राजपूत सेना मुगल सेना पर अचानक टूट पड़ती थी । मुगल सेना अप्रत्याशित आक्रमण से विचलित हो जाती और उनमे हाहाकार मच जाता फलस्वरूप औरगजेब ने शाहजादे अकबर की जगह शाहजादे आजम को उस ओर भेजा ।

"शाहजादा अकबर मारवाड जा रहा है ।" यह समाचार दुर्गादास को उसके एक विश्वासी साथी ने आकर दिया, "वह अपमान की आग मे जला हुआ है ।"

दुर्गादास ने दृढता से कहा, "इसकी चिंता न करे ! आप अपने चद सैनिको को मारवाड की ओर रवाना करे ! राठोडो से कहे कि दुर्गादास राठोड ने आपसे प्रार्थना की है कि आप मुगल सेना पर छुप-छुप कर घातक आक्रमण करे । सीधी लडाई न लडे ।"

राठोड ने समस्त मुगल-सेना को लूटना आरभ कर दिया । उन दिनो दुर्गादास कई-कई राते सो नही पाते थे । सिर्फ महाराजा के लिए लडना, भागना और अपने आपको छुपाना ! न खाने की सुध और न ठहरने की चिंता । सिर्फ शत्रु दल का दमन ! इधर राणा जी की विष द्वारा मृत्यु ! जयसिंह जी का महाराणा बनना ।

मुगल सेना दिन प्रति दिन और बडी सख्या मे आने लगी । अत मे चद राठोड और सिसोदियो ने गुप्त मत्रणा करके एक नया निर्णय लिया ।

राणा जी ने कहा, "औरंगजेब हमे सदा नीति से पराजित करता आया हैं । हमे भी नीति से कुछ नया गुल खिलाना चाहिए ।"

सरदार सोनिग ने राणा जी की बात का समर्थन करते हुए निवेदन किया, "एकलिंग दीवाण ठीक फरमाते है । हमे छल-प्रपंच से मुगलो को हराना चाहिए ।"

राठोड दुर्गादास ने कहा, "क्यो नही हम शाहजादे मुअज्जम को अपनी ओर मिलाले ।"

"दुर्गादास जी का कहना सोलह आने सच है ।" सरदार चूंडावत ने कहा ।

"फिर कौन यह काम करेगा ?"

काफी वाद-विवाद के बाद यह निश्चय किया गया कि देबारी के समीप उदयसागर पर ठहरे हुए मुअज्जम से राव केशरीसिंह चौहान, चूंडावत रत्नसिंह, सोनिग और राठोड दुर्गादास मिले ।

सभी सरदार मुअज्जम के पास गये । मेल-मिलाप की बात शुरू हुई । मुअज्जम की माता नवाब बाई ने उसे इसके लिए मना कर दिया । उसने अपने पुत्र को लिखा-राजपूत तुम्हें बरगला रहे हैं । वे आलमपनाह की ताकत को कम करके उनकी लाठी उनकी भैंस करना चाहते हैं । इसलिए तुम खूब सावधान रहना । समझे ।" इससे दुर्गादास और राणा जी हताश नही हुए । वे अपने प्रयत्न मे लगे रहे ।

रात्रि के निस्तब्ध पहर मे मशाल के क्षीण आलोक मे राणा जयसिंह जी ने दुर्गादास से कहा, "राठोड जी! हमारी समझ मे अब एक ही बात आती है कि हम औरंगजेब के संगठन को तोडे । उसके शक्ति के स्रोतो मे फूट पैदा करके उसकी ताकत को बाट दे ।"

"पर राणा जी, वह अत्यन्त चतुर और सजग है । वह हमारी दाल नही गलने देगा ।"

"अब हमारे मे उतनी ताकत नही रह गयी है जब हम किसी

शाहजादे को अपनी ओर मिला ले ।"

"आप आज्ञा दे तो मै एक वार शाहजादे अकवर से भेट करू । वह जीलवाडे मे तहव्वरखा के साथ रह रहा है । ...आपको विश्वास है कि हमारा वार खाली नही जायेगा ? हमे अपने काम मे सफलता मिलेगी ?" दुर्गादास ने पूछा ।

"मुझे पूर्ण विश्वास है । भगवान एकलिंग हम सब का कल्याण करेंगे ।"

"फिर मैं जाता हूँ । मेरे साथ चू डावत रत्नसिह, सोनिग जी आदि प्रमुख सरदार रहेंगे ।"

दुर्गादास के प्रतिनिधित्व मे यह दल शाहजादे अकवर के पास पहुँचा । अकवर ने उनका भव्य-स्वागत किया । आने का आशय पूछा । सो दुर्गादास ने कहा, "शाहजादे साहव, हम आपकी सेवा मे इसलिए हाजिर हुए है कि हम सव आपकी आधीनता स्वीकार करना चाहते है । ....आपके अव्वाजान लगातार राजपूतो से लडते रहने से अपने आपको निर्वल कर रहे है । हम चाहते है, आप इस नाजुक परिस्थिति का लाभ उठाये । हम सव आपके साथ है ।"

"मैं आपके कहने का मतलव नही समझा ?"

"मतलव साफ है ।" दुर्गादास वोले, "हम आपको दिल्ली का वादशाह वनाना चाहते है । आपके पूर्वजो ने सदा ताकत के वल वादशाहत पायी है ।"

"लेकिन यह कैसे मुमकिन हो सकता है ?"

"एकदम मुमकिन हो सकता है । हम सिर्फ एक ही वात चाहते है--राणा जी को अपने परगने दिये जाये और महाराजा अजीतसिह को जोधपुर का राज्य ।.. आपको हम सव राजपूत वचन देते है कि प्राण रहते हुए हम आपका साथ नही छोडेगे ।"

शाहजादे अकवर के समक्ष स्वर्णिम भविष्य साकार हो उठा ।

तत्नेताक्रम के सपनो ने उसे एक उन्माद मे भर दिया । उसकी कल्प
लोक मे एक विलासमय सम्पन्न-समृद्ध जीवन खड़ा हो गया ।

"हम आपकी बात को मजूर करते है । आपको लिखा
'निशान' देते है ।" अकबर ने दभपूर्ण स्वर मे कहा ।

राठोड दुर्गादास को अपनी चाल सफल होते देख कर अ
प्रसन्नता हुई । शीघ्र उन्होने राठोडो व सिसोदियो को एकत्रित कि
देर करने से कोई नया खेल होने की सभावना हो सकती है इस
विक्रम सवत १७३७ माघ वदी ८ को अजमेर पर आक्रमण करने
निर्णय लिया गया । इसके पूर्व माघ वदी ७ को राठोड दुर्गादा
शाहजादा अकबर को बादशाह घोषित कर दिया और तहव्वरख
मुख्य मत्री । देखते-देखते सारे सिपहसालार अकबर के साथ मिल
राठोड व सिसोदिया के ३०००० हजार सैनिक भी उसके साथ
दुर्गादास ने एक-एक मुगल सैनिक की परीक्षा ली । जिस पर जरा
शक पाया गया, उसको दुर्गादास ने या तो बन्दी बना लिया या
मौत के घाट उतार दिया । वर्षो से प्रतिशोध की ज्वाला से दुर्गा
का अन्तस दग्ध था । निरन्तर मुगलो के अत्याचारो ने उन्हें सुख की
साँस भी नहीं लेने दी थी । आज उन्हे लग रहा था कि अब वे
तेरी कुल्हाडी तेरे ही पावो वाली कहावत सिद्ध करेंगे ।

किंतु शेख शहाबुद्दीन खा जो काफी पीछे रह गया था, सुरक्ष
भाग गया । उसने औरंगजेब को अकबर के विद्रोह के बारे मे बताय
औरगजेब के पावो के नीचे की जमीन खिसक गयी । उसने तुरन्त अप
सेना को सगठित करने की तैयारिया शुरू करदी ।

दुर्गादास राठोड सद्वितीय योद्धाओ व शाहजादे अकबर के सा
अजमेर की ओर बढ रहे थे । अनवरत सघर्ष करते-करते राठोड
शरीर मे बडी थकान सी महसूस हो रही थी, फिर भी इस अन्तिम स
युद्ध की कल्पना से वे द्विगुणित उत्साह से भर जाते थे ।

दिन दुर्गादास को अप्रत्याशित सन्देह ने आ घेरा ।

ा को कूच किये हुए अभी तीन दिन ही बीते थे । रात्रि । । सेना के शिविरो मे लोग विश्राम कर रहे थे । वीरवर तारो भरे आकाश को देख कर सोच रहे थे कि इस युद्ध के महाराजा को अपना खोया हुआ जोधपुर दिला सकेगे । फिर राजकीय कार्यों से निवृत होकर अपने गाँव चले जायेगे । अपनी और पुत्रो के बीच एक शात जीवन यापन करेगे । इस जीवन की त्रा मे उन्होने एक पल भी विश्राम नही किया । दुर्धर्ष सघर्ष रहे ।

वे विचारो मे खोये हुए कई शिविरो को पार कर गये । थोडी और चलने पर उनके कानो मे नाच-गाने की आवाज पडी । इस समर प्रस्थान-वेला मे कौन नाच-रग मे मस्त है ? वे गीत के स्वर के साथ-साथ बढते गये ।

शाहजादे अकबर के शिविर मे नृत्य-गान चल रहा था । विलास सागर मे आकठ डूबा अकबर दीन-दुनिया मे बेखबर मदिरा के जाम जाम चढाये जा रहा था ।

शिविर के मुख्य द्वार पर उसकी खास बादी 'नेक कदम' खडी । साजिन्दो के बीच 'सुरीली' बाई गाना गा रही थी । 'नियाग बू' क नर्तकी का नृत्य हो रहा था । ख्वाजा सरा (हरम के समाचारो लिखने वाला) एक कोने मे बैठा बैठा शराब पी रहा था। नियाग त्यन्त रूपवती, अत्य त सजीली और नाज भरी थी ।

दुर्गादास ने विलास के इस विपुल उदधि को देखा । सोचा कि को सिर पर आता हुआ देख कर जो व्यक्ति सुरापान मे लीन रहता ह अपना अवश्य पतन कराता है । उन्होने तुरन्त नेक कदम से आने की सूचना भिजवायी ।

अकबर सुरा मे मदान्ध कापता-लडखडाता शिविर के बाहर

आया । उसका स्वर भी मदिरा की मादकता से काप एव
"क्या बात है राठोड जी ?"

"आप इस तरह भोग विलास और नृत्य-संगीत
तो शत्रुओ को संगठित होने का अवसर मिल जायेगा और
दिन अपना मनोबल खोते जायेगे । क्यो नही हम रात-दिन

अकबर ने विहस कर कहा, "घबराइये नही ! खुद
तो क्यो डरे इनसान ? सब उसी की मरजी से हो रहा
हिन्दोस्ता के बादशाह बने हैं । इस अवसर पर हमे खुशियो के
मे तैरने दिया जाय ! आप फिक्र न करे। मैं दिल्ली के त
पर अपना कब्जा करके ही दम लूगा ।"

दुर्गादास ने सोच लिया कि अभी यह नशे मे चूर है
किसी तरह की सलाह-मशविरा देना व्यर्थ होगा । अत वे रा
निस्तब्ध वातावरण मे धीरे-धीरे अपने शिविर मे लौट आये ।

शय्या पर अर्धशायित होकर वे बहुत देर तक सोचते
बाहर मसालो के प्रकाश मे मुगल और राठोड सैनिक पहरा दे रहे
उनके हाथो मे नगी तलवारे थी जो कभी-कभी चमक कर अपना
छोड जाती थी ।

न मालूम कब उस योद्धा को निद्रा देवी ने अपनी अंक मे
लिया ? रात ठहर-ठहर कर ढल रही थी ।

× × ×

औरगजेव से मिल चुका है ।"

दुर्गादास की आत्मा जैसे बोल उठी कि हम निसदेह भाग्यहीन है। अब हम बादशाह की फौज से टक्कर नही ले सकते । ' फिर भी साहसी राजपूत युद्ध की तैयारिया करने लगे ।

विशेष शिविर मे रात्रि के समय दुर्गादास , सोनिग, रत्नसिंह और अन्य सरदार बैठे थे । गभीर वार्तालाप हो रहा था कि एक राजपूत सैनिक ने आकर कहा, "मैं राठोड दुर्गादास जी से बात करना चाहता हू ।"

राठोड दुर्गादास उसे एकात मे ले गये । उसने औरगजेव का एक खत देकर कहा, "इसे मैं अकबर के शिविर मे से लाया हूँ ।"

दुर्गादास ने मसाल के उजाले मे खत को पढा । उसमे लिखा था—तुमने राजपूतो को खूब धोखा दिया । हम उन पर दोनो ओर से हमला करके उनको नेस्तनाबूद कर सकते हैं । तुम उन्हे हरावल मे ही रखो जिससे सुबह ही सुबह हमला किया जा सके ।

राठोड दुर्गादास को इस पत्र पर विश्वास नहीं हुआ । उन्हे भली भाति मालूम था कि औरगजेब इस तरह के पत्रो द्वारा शत्रु के सगठन मे फूट डालने की चेष्टा सदा से करता आया है । वे तुरन्त अकबर के पास गये ।

अर्ध रात्रि हो गयी थी । निशीथ की नीरवता अकबर के शिविर के चतुर्दिक बैठी थी । उन्होने अकबर से मिलने के लिए अपनी इच्छा जाहिर की । उसके खास सिपाहियो व खोजों ने साफ कह दिया कि शाहजादे साहब को इस वक्त किसी भी सूरत मे नही जगाया जा सकता । "राठोड दुर्गादास को अपमान प्रतीत हुआ । फिर भी उन्होंने अपने सयम को नही तोडा । वे सीधे वहा से तहव्वरखा के डेरे की ओर आये। वहा उन्हे जब यह पता चला कि तहव्वरखा भाग गया है तब राठोड दुर्गादास का सदेह सत्य मे परिणित हो गया कि इस चाल मे

कुछ सत्यता हो सकती है।

फिर क्या था ? राजपूतो ने परस्पर सलाह की। दुर्गादास राठोड ने ओजस्वी स्वर मे कहा, "हमने इस एय्याशी मुर्दे पर विश्वास करके अपनी शक्ति का ही ह्रास किया। हमे अभी ही यहा से प्रस्थान कर देना चाहिए।"

और राठोड चुपचाप मारवाड की ओर खिसक गये। शाहजादा अकबर मदिरापान मे मदहोश हो रहा था।

१०

प्रभात हुआ।

अकबर ने अपने को अत्यन्त सकटकालीन स्थिति मे पाया। उस समय उसके पास केवल ३५० सैनिक रह गये थे। अब उसे अपनी भूल प्रतीत हुई। उसे लगा कि एक महत्वकांक्षी वीर युवक को कर्तव्य-पूर्ति के समय भोग-विलास से नितात दूर रहना चाहिए।

फिर भी अकबर ने शीघ्रता से अपनी स्त्रियो को घोडो पर बिठाया। अपार धनराशि मे से जितना हो सका उसने ऊँटो पर लादा

और द्रुतगति से मारवाड़ की ओर चल पड़ा ।

बादशाह ने शाहजादे मुअज्जम को अकबर को बंदी बनाने के लिए भेजा । अकबर दो दिन तक निराश्रित सा भटकता रहा । इसी बीच राठोड़ दुर्गादास को उस षड्यंत्र की वास्तविकता पता चल गया । वे पश्चाताप में डूब गये ।

उन्हें अकबर पर अत्यन्त दया आयी । उन्होंने तुरन्त उसे अपनी शरण में ले लिया । शरण में आने के बाद राठोड़ दुर्गादास ने कहा, "आपकी गलती का नतीजा आज समस्त राजपूत जाति को मिल रहा है । जब हम युद्ध की बात करते हैं तब हमें स्त्रियों व सुरा के मोह को छोड़ देना चाहिए ।"

"मुझे क्षमा कर दीजिए राठोड़ सरदार ।"

दुर्गादास ने उन्हें क्षमा कर दिया । अब वे घूम-घूम कर शाहजादा मुअज्जम को तंग करने लगे । जालोर के पास तो राठोड़ी सेना ने बादशाह की फौज को इस तरह की हानि पहुँचायी कि बादशाह ने क्रोध में आकर अपने कई अफसरों की जागीरें भी जब्त करली । अनेक संकटों व विपदाओं के बाद भी दुर्गादास ने अकबर का साथ नहीं छोड़ा । शाहजादे को मेवाड़, गुजरात और अन्त में ५०० राठोड़ों के साथ उसे डूंगरपुर के वन्य प्रदेश व घाटियों में ले जाते हुए, वे शंभाजी के पास चले गये ।

× × ×

११

श्रावण माह आ गया ।

दुर्गादास अपनी जन्मभूमि की मधुर स्मृति मे खो गये। कितना कठोर जीवन है उनका ? अखड तपस्या सा ।

अपने कक्ष मे बैठे–बैठे वे अतीत की स्मृतियो मे खो गये थे। तभी दासी ने आकर कहा, "अन्नदाता, एक चिट्ठी आयी है ।"

चिट्ठी मुकुन्ददास खिची की थी । उसमे उन्होने लिखा था कि राठोड उदयसिह व अन्य सरदार बालक महाराजा को देखना चाहते हे। अब उन्हे अधिक दिन छुपा कर नही रखा जा सकता । ऐसी स्थिति मे आपकी उपस्थिति अनिवार्य है ।

दुर्गादास को भी अपनी जन्मभूमि, अपनी मिट्टी और अपने उन स्थानो की याद आने लगी जहा के कण-कण मे उनके लिए ममता भरी थी ।

वे अकबर के पास गये । अकबर ने मुसकराते हुए कहा, "आइए राठोड सरदार ! आज आप बहुत ही उदास नजर आते है ।"

"शाहजादे साहब, अब मैं मारवाड जाना चाहता हू । मेरी इच्छा है कि आप भी मेरे साथ चले ।"

"नही राठोड जी, वहा मेरी जान को खतरा है । आप मेरे अब्बाजान को नही समझते । वे एक पाखडी फकीर हैं । फकीरी भेष मे वे इतने बर्बर, खुदगर्ज और कातिल है कि बयान नही किया जा सकता ।"

"फिर मुझे हुक्म दिया जाय ?"

"आप जा सकते है । पर आपके बिना मैं भी नहीं रह सकता। अपनी बदनसीबी को लेकर मैं हिन्दुस्तान से दूर, बहुत दूर चला जाऊगा । ईरान, अरब-तुर्की कहीं भी ।"

"शाहजादे साहब, अपनी जन्मभूमि से इतने दूर मत जाइए । वहा कौन आपकी देख-रेख करेगा ?"

अकबर का गला भर आया । रूद्ध स्वर मे वह बोला, "आप सच कहते हैं कि अपने मादरेवतन हिन्दोस्ता को छोडते हुए मेरे रोम-रोम मे दर्द हो रहा है। मेरा दिल तडप रहा हे । पर मैं मजबूर हूँ । मैं तो जहाज द्वारा ईरान चला जाऊगा पर मारवाड मे मेरे बेटे बुलन्द अख्तर व मेरी बेटी सफीयुतुन्निसा की परवरिस की जिम्मेदारी आपकी है ।"

"शाहजादे साहब, आप निश्चित रहिए । मैं उन्हे अपने बच्चो की तरह पालूगा। आपकी अमानत मेरी जान से प्यारी होगी। वक्त बतायेगा कि राठोड दुर्गादास ने अपने एक मित्र के बच्चो को कितने लाड–प्यार से पाला था ?"

"मैं मुसलमान हू और आप हिन्दू । पर आज जान पाया हू कि धर्म या मजहब इनसानो को अलग नही करता । अलग करती है–खुदगर्जी ! जमीन और हकूमत का नशा ! आज मैं हिन्दोस्ता का शाहजादा हू पर अपने ही अब्बा की हकूमत मे मुझे मेरा मादरे वतन और बाल–बच्चे छोड कर जाना पड रहा है ।"

"आप कुछ भी कहे पर म आपसे वादा करता हूँ कि आपके

बच्चे मेरे बच्चो से भी अधिक हिफाजत से रहेंगे। आप बेफिक्र रहिए।"

और फिर दोनो जने गले मिल कर रोते रहे । बिलखते रहे । अकबर ईरान चला गया और दुर्गादास मारवाड की तरफ आ गये ।

१२

राठोड दुर्गादास ज्योंही रतलाम पहुँचे, उनका स्वागत जोधा अखैसिह रत्नसिहोत ने हार्दिक अपनत्व से किया । दोनो राठोडो ने मिल कर परस्पर एक योजना बनायी ।

"आपके पास कितने वीर है ? "दुर्गादास ने पूछा ।"

"यही सौ-दो सौ ।"

"फिर ठीक हैं । हम लोग बादशाही-प्रदेश में लूट--मार करके अपनी माली हालत ठीक करेंगे । अभी हम सीधी लडाई नही लड सकते ।"

राठोड दुर्गादास के नेतृत्व मे सबसे पहले उन्होने मालपुरे को लूटा । वहा उन्हें काफी सम्पति हाथ लगी । वहा के सैयद कुतुब ने उन पर प्रत्याक्रमण भी किया लेकिन बहादुर राठोड बहादुरी से मुकाबिला करके वहा से निकल भागे ।

दुर्गादास निरन्तर भागते-भागते थक गये थे । वहा से वह अपने ठिकाणे भींवरलाई आ गये । वहा उनके स्वजनो व परिजनो ने उनका हार्दिक स्वागत किया । बडे अर्से के बाद उन्होने क्षणिक विश्राम लेना चाहा । पर वे बहुत ही उदास रहते थे । उनका चित्त भी खिन्न रहने लगा । शायद वे अपने उखडे हुए जीवन से पीडित हो गये हो ।

साथ ही महाराजा को अन्य राठोड सरदारो ने प्रकट कर दिया, वह दुर्गादास को तनिक भी पसद नही आया । वे चाहते थे कि उसमे उनकी आज्ञा सर्वप्रथम ली जाती । उनके त्याग और राज्य-सेवा को ये राठोड-सरदार इस तरह क्यो विस्मृत कर गये ? जिस बालक को छुपाने के लिए उन्होने अपना सुख-चैन छोडा, कई राते आखो मे ही काटी, उस बालक को उनकी महत्ता को भूल कर प्रकट कर दिया ?

अपने 'भोचे' पर वे तन्द्रिलावस्था मे पडे हुए यह सब सोच रहे थे । उन्हे फिर वही अहम् जनित कुठाए आकर घेरने लगी । बचपन से लेकर आज तक कोई न कोई उनकी उपेक्षा करता आया है।

उन्होने करवट बदली । ठकुराणी ने दूध का गिलास लाकर उन्हे दिया । उन्होने दूध का गिलास खाली करके अपनी पत्नी से कहा, "मेरा जीवन दुर्भाग्यो मे घिरा है ।" "किन्तु मै इस बार महाराजा की सेवा मे नही जाऊंगा । राठोडो का साथ नही दूंगा ।"

"क्यो ?" राणी मा ने सिर पर 'बोरला' बाध रखा था । उगलियो मे अगूठिया । हाथो मे चूडिया । बाजूबन्द । नाक मे नथनी ।

"क्योकि वे लोग मेरा कोई महत्व नही समझते । आप ही सोचिये ठकुराणी सा, जिस व्यक्ति ने अपने जीवन की बाजी महाराजा को बचाने के लिए लगादी हो । उसे जब महाराजा को 'महाराजा' के रूप मे प्रकट करते समय न तो पूछा जाय, और न उसकी उपस्थिति को महत्व दिया जाय, यह उसके लिए अत्यन्त दुख की बात नही है ?"

"समय-समय की बात होती है । पर इससे हमें अपने कर्तव्य से नहीं डिगना चाहिए । ठाकुर सा, ऐसी बाते होती ही रहती हैं ।"

दुर्गादास ने एक बार अपनी पत्नी की ओर देखा । फिर वे लेट गये । निशा और गहरी हो गयी थी ।

इसी अन्तर्द्वन्द्व मे समय गुजरता गया ।

एक दिन राठोड सरदार को यह समाचार मिला कि महाराजा स्वय उनके 'ठिकाणे' पधार रहे हैं ।

दुर्गादास इस समाचार को सुन कर प्रसन्न हुए । उन्होने निर्णय किया कि वे अपने तमाम दल-बल से महाराजा की श्रेष्ठ अगवानी करने के लिए पहुँचेगे । किन्तु फिर उनके अहम् ने उन्हे रोक दिया ।

"मैं नहीं जाऊ गा । मेरा उनसे क्या वास्ता ? यदि वे मेरी कृपाओ को स्मरण रखते तो मेरे परामर्श बिना अपने आपको प्रकट ही नही करते ।"

दुर्गादास के सभी सम्बन्धियो ने आकर उनसे निवेदन किया, 'आपको गुस्सा छोड देना चाहिए । आखिर वे हमारे अन्नदाता हैं । धरती के 'धणी' ह ।"

दुर्गादास ने कोई उत्तर दिया । उनके सतेज नेत्रो से लग रहा था कि वे भीतर-भीतर आत्मदाह मे सुलग रहे ह । तडप रहे ह ।

"आपने जो सेवाए की हैं, वे कभी भी भुलायी नही जायगी । लेकिन आप कोई ऐसा कदम उठाए जिससे आपके महान् बलिदान की महिमा-गरिमा पर पानी फिर जाय यह जरा भी ठीक नहीं । ।"

"आप मेरी पीडा को नही जानते । जिस राठोड वश की रक्षा के लिए मैंने वन-वन की खाक छानी,पर्वतो की घाटियो मे मारा-मारा फिरा, पागल का अभिनय किया, उसका प्रतिदान यह ? उपकार का बदला प्रत्युपकार ही हो सकता, अपकार नहीं । श्रेष्ठ व्यक्ति वही है जो एक लेकर दो देता हो ।"

"पर यह भी मानना पडेगा कि वे अभी तक अबोध और नादान है । महाराजा स्वय प्रकट-अप्रकट के रहस्य मे अनजान हैं। वे इसके गभीर परिणामो से भी अपरिचित होंगे । ये सब चद राठोरा की हठ का परिणाम है । आप ऐसा क्यो दर्शाते ह जो इस बात का द्योतक लगे कि आप महाराजा से नाराज हैं ।"

बहुत समझाने-बुझाने के बाद दुर्गादास अपने सरदारो के साथ उनकी अगवानी करने के लिए गये । महाराजा का उन्होने फिर यथेष्ट सम्मान किया । रात के भोजन समय वहा ढोलनियो के नृत्य-गीत का भी आयोजन किया गया ।

सबके सो जाने के बाद महाराजा ने दुर्गादास से क्षमा मांग कर पूछा, "अब मुझे क्या करना चाहिए ? आप विश्वास रखे कि आपकी आज्ञा के बिना भविष्य मे मै अपना कोई कदम नही उठाऊगा । मुझे इस बात का हार्दिक दु ख है कि राठोडो ने मुझे प्रकट करने मे आपको नही पूछा ।"

दुर्गादास इन विनम्र शब्दो से पुराना वैमनस्य तुरन्त भूल गये। अभिमान से अपना वक्ष फूलाते हुए बोले, "आप पहाडो मे चले जाइए। मै देश मे लूट-पाट मचाता हू । हम सीधे मुगलो का सामना नही कर सकते । हमे अपनी लडाई की प्रणाली बदलनी पडेगी ।"

महाराजा ने उनकी आज्ञा मानली ।

दूसरे ही दिन दुर्गादास ने भीवरलाई से प्रयाण कर दिया और महाराजा ने पर्वत की ओर। जैसे ही दुर्गादास द्वारा मुगलो से लडने की सूचना मारवाड के गाव-गाव फैली, वैसे ही राठोडो मे दुगुना उत्साह भर गया । दुर्गादास गश्वारूढ होकर हाथ मे भाला लेकर जगह जगह मुगलो को लूटने लगे । मुगल ठिकाणो मे त्राहि-त्राहि मच गयी । साथ ही दुर्गादास ने अपने समस्त सगी-साथियो को यह हिदायत दे रखी थी कि कोई भी मुगल-स्त्री व बच्चो पर अत्याचार न करे। समय-

समय पर वे शाहजादे अकवर की वेटी और उसके वेटे को भी सभाल लेते थे। उनके पढने-लिखने की दुर्गादास ने समुचित व्यवस्था कर दी थी। लडकी को पढाने के लिए अजमेर से उस्तादिन वुलायी गयी थी।

लूटपाट से फुर्सत मिलने पर जव कभी दुर्गादास ससार की दृष्टि मे छद्म उस स्थान पर जाते जहाँ अकवर के पुत्र व पुत्री रहते थे तो वे दोनो वच्चे उनके गले से लिपट जाते थे। काका सा—काका सा की रट से वे कमरे को गुजा देते थे। कहते, "गिरधर काका सा कहते है कि आप न होते तो अव्वाजान की जान खतरे मे पड जाती।"

दुर्गादास उनका सिर थपथपा देते। फिर गिरधर जोशी जो वच्चो का सरक्षक था, उसे लाख वार वच्चो की श्रेष्ठ परवरिस के लिए कहते।

फिर वही लूटमार, हमले और क्षण भर का विश्राम! सिध से अजमेर तक दुर्गादास ने तूफान मचा दिया। वे मुगलो को मौत के घाट उतारते हुए कहते, "मुझे अपने देश की स्वतन्त्रा चाहिए। हमारी धरती पर कोई परदेशी नही रह सकता! मुक्ति, सग्राम और स्वाधीनता। मुक्ति के लिए सग्राम, सग्राम के वाद स्वाधीनता! वे सवको यही नारा दे रहे थे, 'अपनी जन्मभूमि की स्वतन्त्रता के लिए शत्रुओ को किसी तरह परास्त करो।" फिर क्या था? राठोड तेजकरण, राजसिह, मदनसिह मनरपोत, मेडतिया गोकुलदास और जोधा हरनाथसिह, सभी वीरो ने मारवाड के सम्पूर्ण प्रदेश म हाहाकार मचा दिया।

और दुर्गादास अपनी कूटनीतिज्ञता से अपने सग वडे वडे योद्धाओ को सम्मिलित करके वे रिवाडी और रोहतक तक डाके डालने लगे। वादशाह तग आ गया। वह किसी भी तरह दुर्गादास की शक्ति को क्षीण करना चाहता था। और देश तथा स्वाधीनता प्रेमी दुर्गादास ने अव अपना लक्ष्य जोधपुर और अजमेर वनाया। जोधपुर के कासिमवेग की वे रसद की गाडिया लूट लेते थे। उसकी फौजी टुकडियो

का सफाया कर देते थे। उसके किसी भी उत्सव–आयोजन में विघ्न डाल देते थे। वह घबरा उठा।

वि० सम्वत १७४७। बार-बार दुर्गादास से चोटें खाये हुए हाकिम शफी खां ने सेना एकत्रित करनी आरम्भ की। दुर्गादास ने अपनी सेना के साथ उस पर पहले ही आक्रमण करने का निश्चय किया। वह 'नाडौ' में चला गया। दुर्गादास ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। वे छाया की भाँति उसके पीछे लग गये।

और अंत में दुर्गादास के भीषण आक्रमण से शफी खां भाग खड़ा हुआ। दुर्गादास ने उसे जाते-जाते चेतावनी दी, "मेरा मारवाड़ मुझे वापिस करदो। महाराजा अजीतसिंह जी को वहां का राजा मानलो वर्ना मैं मुगलिया ठिकाणों की ईंट से ईंट बजा दूंगा।"

शफी खां भयभीत और आतंकित हो गया। जब वह अजमेर पहुँचा तब शाहंशाह औरंगजेब का फरमान आया हुआ था। उसने भी शफी खां को बहुत ही उपालम्भ दिये और दुत्कारा। विवश हो, शफी खां ने तकरार की जगह-झूठे प्यार और धोखाधड़ी का आश्रय लिया। उसने एक परवाना लिख कर अजीतसिंह जी के पास भेजा। उसमें उसने विनीत होकर निवेदन किया, 'मेरे पास आपकी जागीर सौंपने की शाही सनद आ गयी है, आप उसे सम्मान सहित आकर ले जावें।"

महाराजा अपने बीस हजार राठोड़ और अन्य विश्वसनीय योद्धाओं के साथ अजमेर की ओर चले। राठोड़ दुर्गादास को बीच रास्ते में ही एक बात सूझ गयी। वे पड़ाव डाली सेना को देखते हुए महाराजा के पास गये और विनीत स्वर बोले, "अर्ज यह है महाराजा, मुगलों ने सदा पराजय के समय छल का सहारा लिया है। मुझे इसमें भी प्राण की गंध आती है। आप पहले इस कथन की सच्चाई का पता लगा लीजिए। कहीं शफी खां धोखे से हमें पकड़ना तो नहीं चाहता है?"

महाराजा को बात जच गयी। उन्होने तुरत मुकुन्ददास चपावत को भेष बदल कर इस रहस्य का पता लगाने के लिए भेजा। उसने दूसरे दिन आकर बताया-शफी खा हमे धोखे से बरबाद करना चाहता है। अच्छा हुआ कि ठीक समय पर दुर्गादास जी को यह बात ध्यान आ गयी।"

महाराजा ने श्रद्धाभरी दृष्टि से दुर्गादास की ओर देखा। सौहार्द्रपूर्ण स्वर मे बोले, "जोधपुर का राज्यवश सब कुछ भूल सकता है पर आपको नही। जहाँ आपका पसीना बहेगा, वहा उनका रक्त बहेगा।"

"अन्नदाता! पीढी दर पीढी आपका नमक इस शरीर मे है। हमारी तो एक ही इच्छा रहती है कि हसते-हसते मारवाड, हिन्दू धर्म और अपने स्वामी के लिए बलिदान हो जाय।"

फिर वही चैरेवति चैरेवति .....

वही लूट-खसोट और छुटपुट हमले!

कभी-कभी किसी गाव मे पूर्ण विश्राम। चद दिनो का पूर्ण विश्राम!

इसी तरह सतत सघर्ष के बीच दुर्गादास 'भडमिया' गाव मे विश्राम कर रहे थे। अजमेर सूबेदार उन पर घात लगाये बैठा था। उसने सोये हुए सिह पर आक्रमण करना ठीक समझा। वह फौज लेकर चढ आया। दुर्गादास ने अपने तमाम साथियो को आमन्त्रित किया। घमासान लडाई हुई। उसमे दुर्गादास के कई साथी काम आये पर उन्होने साहस नही छोडा। क्योकि वे कहा करते थे—मृत्यु का नाम ही नया जीवन है अत मृत्यु से न डरो।

वह अपने पथ पर दृढ निश्चय के साथ डटे रहे।

× × ×

१३

बादशाह औरंगजेब ने शफी खां को फरमान लिख कर फिर आदेश दिया कि दुर्गादास जैसा महाबली हमारे अधिकार में ताकत से नहीं आ सकता, इसलिए तुम अपनी ओर से शाहजादे अकबर के बेटे और बेटी के लिए बातचीत करो, कोई नयी सूरत निकल आये।

शफी खां ने दुर्गादास राठौड़ से कई बार समझौता करने के लिए अनेक असफल प्रयास किये। उससे बादशाह नाराज तो था ही, इसलिए उसने इस बार गंभीर प्रयत्न करने आरम्भ किए कि वह किसी भी तरह वीर दुर्गादास को खुश करके अकबर के बेटे और बेटी को प्राप्त करले ताकि वह बादशाह की कृपा फिर से हासिल करले।

इसलिए उसने जोधपुर के एक सरदार नारायणदास कुम्पावत को दुर्गादास के पास भेजा। दुर्गादास उस समय इधर-उधर भटक रहे थे। अपनी व्यस्तता के बावजूद भी वे अकबर की अमानत की पूरी तरह निगरानी रख रहे थे। जब किसी तरह नारायणदास उनके पास पहुंच गया तब उसने दुर्गादास के समक्ष अपना मन्तव्य रखा।

"दुर्गादास जी! मुझे शफी खां ने आपके पास भेजा है। वे चाहते हैं कि आप बादशाह के पोते-पोती को वापस कर दें।"

"क्यो ?"

"क्योकि वे अपनी औलाद को अपने पास ही रखना चाहते है।"

"और यदि मै उनकी औलाद को न लौटाऊ तो ?"

नारायणदास गम्भीर हो गये। उनकी भौहे वक्र हो गयी। वे भारी स्वर मे बोले, "बादशाह आपको माफ नही करेगे। अब वे बडी भारी सेना लेकर आप पर चढ आयेगे।"

दुर्गादास ने हुँकार भर कर कहा, "नारायणदास जी, जब बादशाह अपनी औलाद के लिए हमसे लड सकता है, फिर हम अपनी मातृभूमि के लिए क्यो न लडे ? आप बादशाह को फरमा दीजियेगा कि दुर्गादास बच्चो को आज देगा न कल ! यदि उन्होने अधिक जोर-जबरदस्ती की तो मुझे मालूम नही कि उनके बच्चो का जीवन खतरे मे पड जाय ! •• आप उन्हे मेरी ओर से अरदास कर दीजियेगा कि जब तक महाराजा की जागीर और उनका उन्हे मौरूसी हक नही मिलेगा तब तक मै उनके पोते-पोतियो को वापस नही करूगा।"

नारायणदास ने जाकर शफी खाँ को सारी बाते और दुर्गादास की धमकी भी सुना दी।

× × ×

१४

औरगजेब ने परेशान होकर कहा, "नहीं-नहीं, ऐसा नहीं हो सकता ! कासिम खां और लश्कर खां को अजीतसिंह ने परास्त कर दिया ।...... नहीं !"

"हां गरीबपरवर, उस लड़ाई में दुर्गादास जी के पुत्र ने बड़ी वीरता दिखायी । जैसा बाप वैसा बेटा !"

"लग रहा है कि राठोड़ों की लुकी-छुपी लड़ाइयों और जाकर पहाड़ों में छुप जाने ने हमें काफी कमजोर कर दिया है ।"

"गुस्ताखी मुआफ हो आलीजहां, कुछ मुगल-सिपाहियों ने राठोड़ों के यहां गुलामी भी करली है । मारवाड़ में मुगलों की ताकत का खात्मा सा हो रहा है ।"

"ऐसा नहीं होगा ।" बादशाह ने गर्ज कर कहा है ।

"हो रहा है जहांपनाह !" गोरे नासिर ने सिर झुका कर कहा, "आपको यह सुनकर हैरानी होगी कि शाहजादे अकबर साहब की साहबजादी अब जवानी की ओर बढ़ रही है, ऐसे हालात में उसे जल्द से जल्द अपने पास बुलाया जाना चाहिए । बेअदबी के लिए मुआफी चाहता हूं जहांपनाह, पर कहीं मुगलिया खानदान की इज्जत खाक में

मिल गई तो बादशाह सलामत का आबदार चेहरा दागो से भर जायेगा ।"

बादशाह का चेहरा पीला पड गया । वह कापते स्वर मे बोला, "हम ऐसा नही होने देगे । हम शुजातखा को लिखते हैं' 'तुम हमारी इज्जत की हिफाजत करो । किसी भी कीमत पर करो ।"

शुजात खा ने अपने प्रयत्न जारी रखे । उधर फिर राणा जयसिंह और उनके पुत्र अमरसिंह के बीच मन मुटाव हो गया। दुर्गादास को हिन्दुओ के आपसी झगडो से बडा ही दुख होता था । वे सतत हृदय से हिन्दुओ की आपसी फूट के बारे मे सोचते-सोचते उद्विग्न हो जाते थे और कभी-कभी रो भी पडते थे । कहते थे,"कब ये हिन्दू अपने स्वार्थो को छोड कर सम्पूर्ण आर्यव्रत के हित मे सोचेंगे। कब उनमे स्वस्थ जातीय-धार्मिक और राष्ट्रीय गौरव आयेगा ?"

उन्हे स्मरण हो आया । एक बार इसी तरह नासमझ और विद्रोही कुवर अमरसिंह राणा जी से नाराज होकर कुभलगढ चले गये थे । मुगलो के आक्रमणो की चिंता किये बिना वे राणा जी पर ही आक्रमण करने को उद्यत हो गये। तब विकट स्थिति उत्पन्न हो गयी थी।

तब दुर्गादास अपने तीस हजार सैनिको के साथ राणा जी की सहायता के लिए गये थे । लड कर अपनी शक्ति क्षीण करने की बजाय उन्होने अमरसिंह को जाकर समझाया । वे स्वय कुवर अमरसिंह से मिले । बोले, "कुवर सा, जब आप मुगलो के अत्याचारो से पीडित हैं तब आपको इस तरह पितृ-द्रोह करने की क्या सूझी ?"

"वे मेरी प्रतिष्ठा नही करते ।"

"यह मातृभूमि के समक्ष बहुत छोटी बात है । आपको अपना विद्रोह अभी, यही पर समाप्त करना होगा। पिता से क्षमा माँगनी होगी । जब देश पर शत्रुओ के पाव पड गये हो तो वीरो को चाहिए कि वे पलक झपकने न दें । स्त्रियो को चाहिए कि वे चूडियो की

खनक की जगह तलवारो की टकराहट सुनाये । आप एक वीर पु
है । आपने यदि अपने निजी स्वार्थ के पीछे देश के कर्तव्य को नहीं
समझा तो ... ।"

"तो......।"

राठोड सेना राणा जी का साथ देकर आपके मुट्ठी
भर सैनिको को रोद देगी । आप यह न समझे कि राणा जी अपने
स्नेह-सागर मे जन्मभूमि की आन और शान को डुबो देंगे । नहीं,
कदापि नही । ऐसा नही हो होगा । हम आपके विरुद्ध राठोडो की
एक-एक तलवार कर देंगे ।"

तत्काल अमरसिंह जी दुर्गादास की धमकी से भयभीत हो गया
था और उसने राणा जी से क्षमा मांगली थी पर आज फिर वह दग
द्रोह करने पर उतारू हो गया । महाराजा अजीतसिंह जी स्वयं उधर
गये थे । उन्होने जयसिंह जी के भाई गजसिंह जी की पुत्री से विवाह
भी किया । इस विवाह मे महाराजा को नौ हाथी और १५० घोड़े
मिले ।

दुर्गादास उस विवाह मे उपस्थित नही हो सके । मारवाड के
साथ उनकी अपनी व्यक्तिगत उलझने भी बढ गयी थी । आयु मे वृद्धि
और शारीरिक शक्ति मे ह्रास हो रहा था ।

शुजातखा ने पुन अपना प्रतिनिधि ईश्वरदास को उनके पास
भेजा । वह पाटण का नागर ब्राह्मण था और जोधपुर मे अमीन के पद
पर कार्य करता था । उसने अपने कार्य काल मे राठोडो से काफी
मित्रता बढायी थी । उसने वहा के प्रतिष्ठित राठोडो से अकबर के
बच्चों के लौटाने के बारे मे वार्तालाप भी की।

दुर्गादास का विश्वस्त आत्मीय गिरधर जोशी के पास ही दोनों
बच्चे थे । सुखी और सतुष्ट थे । उन्होने कभी भी अपने जाने की
इच्छा प्रकट नहीं की । उन्हे मालूम हो गया था कि उनके दादा ने ही
उनके अब्बा को हिन्दोस्ता छोडने के लिए विवश किया था । किन्तु

उन बच्चो को अपने दादा की अत्यधिक धार्मिक अन्धता मे घृणा सी थी। दुर्गादास ने उन्हे बताया था, "आपके दादा जी ने हमारे हजारो मन्दिरो को तोडा है, जनेउओ की होली मे जलायी है । हमारे स्त्री-बच्चो की बेइज्जती की है । शहरो मे लूट-खसोट की है । ... पर हम हिन्दू आपके साथ ऐसा नही करेगे । हमारी गैरत और हमारा धर्म हमे यह नही सिखाता कि हम निर्दोष इन्सानी-खून से अपनी प्रतिहिंसा की आग बुझाए । हमारे धर्म मे सहिष्णुता अपनी पराकाष्ठा पर है । किसी आत्मा को निराकारण सताना हमे पसन्द ही नही । पर मुझे ऐसा लगता है अख्तर, एक समय ऐसा आयेगा, जब मुगलो की असहिष्णुता, सकीर्णता और मार काट उनके विरुद्ध घृणा भर देगी और लोग इसके बदो को भी इन्सान की जगह शैतान समझेंगे । मेरे बेटे, हर धर्म श्रेष्ठ और उदार होता है । हर धर्म मनुष्यता की सेवा के लिए होता है पर जिस तरह तुम्हारे दादा जी ने इस्लाम को पेश किया है,उसने महान् अकबर की महानता को मिटा दिया,उसकी एकता को खत्म कर दिया और उसने एक बार पुन दोनो धर्मो के बीच खाइया पैदा कर दी ।"

"पर मैं आपके लिए अपने दादा जी को कहूगा कि काका सा को क्षमा करने के साथ-साथ उनकी सारी बाते मानली जाय ।"

"तुम कुछ भी मत कहना बेटा, मैं सब ठीक कर लू गा 'तुम्हारे काका मे इतनी शक्ति है ?"

"पर मैं यह जरूर कहूगी कि दुर्गा काका सा ने मुझे जितने लाड प्यार से रखा उतना शायद ही कोई दूसरा रखता ।"

कुछ शब्द शाहजादी राजस्थानी भाषा के सीख गयी थी । कभी-कभी उनका प्रयोग भी कर लेती थी ।

जब ईश्वरदास निरन्तर दुर्गादास के पास जाकर शाहजादी को लौटाने के लिए कहा तब दुर्गादास ने उसे स्पष्ट कह दिया, "मैं एक

स्वामी भक्त सेवक हूँ। मुझे अपने लिए कुछ भी जागीर-जायदाद नहीं चाहिए। मैं सिर्फ चाहता हूँ कि मेरे महाराजा को अपनी जागीर मिले। अपने अधिकार मिले।"

"सम्पूर्ण रूप से तो अभी उन्हें जागीर का अधिकार प्राप्त नहीं मिल सकेगा। आप एक बार महाराजा से विचार-विमर्श कीजिए। सारी स्थिति समझाइए। कोई रास्ता नया निकल आये।

"मैं उन्हें समझाने की चेष्टा करूंगा।"

उधर ईश्वरदास ने भी प्राणप्रण से यह चेष्टा की। उसकी तीक्ष्ण बुद्धि ने दुर्गादास की मन स्थिति का भी अध्ययन किया कि वह अपूर्व वीरता का धनी निरन्तर १८ वर्ष तक भागते-लड़ते थक चुका है। ऊब चुका है। स्वयं दुर्गादास ने एक बार महाराजा के हितों की रक्षार्थ सीधी बातचीत करनी चाही। इसलिए उसने ईश्वरदास से कहा, 'मेरी सुरक्षा का प्रबन्ध आप करें। मेरे परिवार को किसी तरह की कोई हानि न हो।"

ईश्वरदास ने तुरन्त उसकी बात मानली। फिर वह शुजात खां के पास गया। यह बात बिना शर्त तय हो गयी कि शाहजादी को सौंप दिया जाये। बिदाई की घड़ी आयी। दुर्गादास ने अश्रुपूर्ण नेत्रों से शाहजादी को बिदाई दी। उसके सिर पर स्नेहपूर्ण हाथ फेरते हुए राठौड़ वीर ने कहा, 'बेटी, आज तुम्हारे बाप की एक धरोहर मैं उसको लौटा कर रहा हूँ। ब्याज भी कितना अच्छा मिला है जहाँपनाह को।"

"ब्याज कौन सा, काका सा?" भोलेपन से शाहजादी ने पूछा।

'ब्याज यह बेटी कि तुम्हें मैंने [illegible] के रूप में [illegible] था, तब तुम बच्ची थी। [illegible] प्यार दिया और जवानी दे रहा [illegible]'।

बेटी तुम्हारे काका से कोई भूल हुई हो तो [illegible]"

नहीं काका सा, [illegible] ने आपको [illegible]

भूल पाऊंगी । • आपने जिस तरह हमे पाला है, वह काबिले तारिफ है ।"

दुर्गादास ने ईश्वरदास को शाहजादी सौंप दी । शाहजादी को ईश्वरदास ही लेकर औरगजेब के पास गया । जब उसने शाहजादी को देखा तब वह विह्वल हो गया । सबसे पहले उसने यही पूछा, "दुर्गादास ने तुम्हारे साथ कैसा बर्ताव किया ?"

"जहापनाह, उन्होंने मुझे किसी चीज की तकलीफ नही दी । मुझे अपनी बेटी की तरह पाक और पर्दे मे रखा । मुझे 'कुरान' पढाने का पूरा इन्तजाम किया । उनकी महरबानी से आज मुझे कुरान जबानी याद है । •

इसी बात पर बादशाह अतीव प्रसन्न हो गया । उसने तुरन्त अपनी पोती से पूछा, "इसके एवज मे दुर्गादास को क्या इनाम दिया जाय ?"

"उनके इनाम की कोई कीमत नहीं । जितना दे, थोडा ।" उनके अहसानात के बदले नही चुकाये जा सकते । गरीबपरवर ! वे यदि चाहते तो आपकी इज्जत को बाजार की बिकने वाली चीज बना सकते थे ।"

बादशाह ने ईश्वरदास को बुलाया । उससे कहा, "आज हम दुर्गादास को मनसब देते है, उसकी माहवार तनख्वाह भी तय करते है । और उसके सारे पिछले गुनाह भी माफ करते है । 'उसको कहना कि वह शाहज़ादे बुलन्द अख्तर को भी हमे लौटा दे । और एक बार वह बहादुर हमारे सामने पेश भी हो ।"

ईश्वरदास ने कोर्निश करके कहा, "यह नाचीज़ आपकी दोनो ख्वाहिशें पूरी करने चेष्टा करेगा ।"

बादशाह ने उसे भी इनाम दिया ।

ईश्वरदास दुर्गादास से फिर मिला । ईश्वरदास की बादशाह से

जो-जो बातें हुई थी, उन्हें उनके समक्ष रखा । दुर्गादास ने कहा, "मैं महाराजा के लिए जोधपुर की जागीर चाहता हूँ । उनके सम्मान के बिना मेरा सम्मान व्यर्थ है । मैं इतना बड़ा मनसब ऐसी स्थिति में नहीं स्वीकारता । पहले महाराजा के उनके अपने अधिकार दिये जायें, बाद में मुझे ।"

'लेकिन आप यदि बुलन्द अख्तर ।"

दुर्गादास समझ गये कि बादशाह उनसे शाहजादे को लेना चाहते हैं पर वे शाहजादे को नहीं देंगे । इस शाहजादे के कारण ही उन्हें अपने सपने पूरे होने की आशा थी । उन्होंने विहँस कर कहा, ऐसा नहीं हो सकता विप्रवर, मैं महाराजा के सम्मान के लिए अपने निजी स्वार्थों को किसी भी क्षण छोड़ सकता हूँ ।"

"आप मेरी बात के मर्म को समझिए । राठौड़ जी ! इस तरह उखड़े हुए भटकते रहने से किसी परिणाम तक नहीं पहुँचा जा सकता।"

"मैं इस पर सोचूँगा ।" दुर्गादास ने कहा । वास्तव में वे अब थक गये थे । चाहते थे कि कहीं सुख और शांति का जीवन व्यतीत किया जाय । वे कभी-कभी सोचते थे कि उन्होंने सिर्फ अपने स्वामी के प्रति कर्तव्य की पूर्णता के अतिरिक्त कौन से उत्तरदायित्व की पूर्ति की ? उनकी पत्नी, पुत्र और परिवार के अन्य लोग ?

दुर्गादास ऊहापोह में रहते थे । तभी उनके पास महाराजा का एक सरदार आया । उसने भी यही बताया कि शादी के बाद महाराजा का मारे-मारे फिरना उचित नहीं है । वे भी थक गये हैं । जम कर रहना चाहते हैं । अब दुर्गादास ने अपनी शर्तों में कमी कर दी । उन्होंने ईश्वरदास को बुलाकर कहा, "हमें आपकी बातों से थोड़ा संतोष हुआ, हमें बादशाह की मनसब मंजूर है । महाराजा को जालोर, साँचोर और सिवाणा की जागीर दे दी जाय ।"

"दुर्गादास जी, आपने सचमुच अपनी मातृभूमि के हित को सा

सोची है ।"

"पर इसमे किसी षडयन्त्र की गंध · ।"

"नही-नहीं, वे शाहजादे के एवज मे आपके साथ बडे सा बडा समझौता करना चाहते है ।"

दुर्गादास ने शाहजादे को सौंप दिया ।

बादशाह ने उन्हे इस्लामपुरी के खेमे मे अपने से मिलने के लिए आमन्त्रित किया ।

दुर्गादास वहाँ गये ।

इस्लामपुर दक्षिण मे भीमा नदी पर स्थित था । वहाँ जब दुर्गादास के आगमन की सूचना पहुँची तब मुगल सेना और परिवारो मे हलचल मच गयी ।

राठोड दुर्गादास के शौर्य की गाथा घर-घर पहुँच गयी थी । अकबर के बेटे—बेटी को उन्होने जिस मान-सम्मान से रखा था, उस बात ने समस्त मुगल सेना मे उनका आदर उत्पन्न कर दिया था । बडी भीड एकत्रित हो गयी थी—उस वीर के दर्शनार्थ ।

शाही खेम के प्रवेश द्वार पर बहादुर सैनिको का पहरा था । हालाकि बादशाह ने स्वय उससे मिलने की इच्छा प्रकट की थी पर उस शकी शहशाह ने स्पष्ट शब्दो मे कह दिया, 'उसे तलवार के साथ हमारे सामने न लाया जाय ।"

"क्यो ?"

"हमे जल्दी से किसी पर यकीन नही आता ।"

इसलिए एक बार दुर्गादास को अपमान सा अनुभव हुआ । फिर उन्हे अपने दुरूह जीवन का स्मरण हो आया । उन्हे लगा कि अब वे थक गये हैं । वीर दुर्गादास तो अब भी वर्षो तलवार की धार पर चल सकता है, पर उसके भीतर का आदमी दुर्गादास थक गया है, शक्ति हीन हो गया है । उन्होने चुपचाप अपनी तलवार छोड दी । इससे

उन्हे अन्य शस्त्र नही छोडने पडे । फिर भी दुर्गादास के आतंक से कोई भी मुगल अधिकारी मुक्त नही था, इसलिए बादशाह के अर्थ-मंत्री रुहुल्ला खां ने दुर्गादास के हाथो को रूमाल से बांध दिया ।

"ऐसा क्यो खां साहब ?" दुर्गादास गर्जकर बोले ।

"आप इसे अपनी बेइज्जती न समझे । हकीकत मे लोग आपकी बहादुरी से डरे हुए हैं ?"

दुर्गादास शांत हो गये ।

उन्होने भीतर प्रवेश किया । मुगलिया सल्तनत के आला-अफसर उस ढलती उम्र के वीर महापुरुष को देखते रह गये । उनके बाल पक रहे थे । बुढ़ापा भी आने लगा था किंतु नेत्रो मे अभी भी शिव के तीसरे नेत्र की भांति तेज और ज्वाला थी ।

उन्होने अंगरखा, कमरबंद और धोती पहन रखी थी । पांव मे कामदार जूती ।

उन्होने बादशाह को सिर झुकाकर मुजरा किया ।

बादशाह ने उनका स्वागत करते हुए, "हम आपके तहेदिल से शुक्र गुजार है । आपने हमारी औलाद के साथ जो सलूक किया है, वो काबिले तारिफ है ।

दुर्गादास मौन रहे ।

"आपको देखने की हमारी दिली बड़ी ख्वाहिश हो रही थी । शाहजादी आपकी बड़ी तारीफ करती है । काका सा काका सा की रट लगाती रहती है । आपने अपनी मोहब्बत का उस पर जादू कर दिया है ।"

दुर्गादास की आखे गीली हो गयी ।

"अरे हम आपके हाथ खुलवाने तो भूल ही गये । राठौड़ को एकदम आजाद कर दिया जाय ।"

दुर्गादास को एकदम स्वतन्त्र कर दिया गया ।

वादशाह ने दरवार मे घोपणा की,"दुर्गादास को तीन हजार का मनसव दिया जाता है ।"

लोगो ने हर्ष ध्वनि की ।

उसी समय शाही परम्परा के अनुसार वीरवर दुर्गादास को एक रत्न-जडित कटार, एक स्वर्ण पदक, एक मोतियो की माला और एक लाख रुपये नकद दिये गये । दुर्गादास ने उसे मुसकराते हुए स्वीकार किया । किंतु जब वे यह सम्मान लेकर अपने शिविर मे आये तब एकात मे भर-भर आये । सोचने लगे, "जीवन के अथक सघर्प, त्याग और युद्ध का फल यही है तो व्यर्थ है सभी कुछ । यह मनसव मेरी विजय नही पराजय है । निम्न पराजय ?"

वे व्यथित हो गये ।

धीरे-धीरे उन्हे लगा कि जब तक किसी देश के लोग सगठित होकर नही रहेगे, उस देश को कोई भी वाहरी शक्ति अपने अधिकार मे कर सकती है । ये हिन्दू सगठित नही रह सकते ! मरहठा, सिसोदिया, राठोड, चौहान ... सब विखरी हुई शक्तिया ! छिन्न-भिन्न सगठन ।

वे मार्मिक पीडा से कराह उठे ।

× × ×

१५

वर्षों के पश्चात पहली बार राठोड दुर्गादास ने असीम विश्रान्ति प्राप्त की। पाटण के अणहिलवाडा राज्य के वे फौजदार नियुक्त हुए।

रात्रि हो चुकी थी। निरभ्र गगन मडल मे हेम-प्रभ रजनीश उदित हो गया था। नभ-गगा मे चन्द्र तरणी सा मथर-मथर प्रवाहित हो रहा था। सरोवर मे सद्य विकसित कुमुदनियों का सौरभ लेकर पवन का शीतल सुवासित झोका थम-थम कर आ रहा था। अल्प क्षण व्यतीत होने के उपरात प्रतीची-प्रागण से मेघ खड तैरते हुए नभ गगा की ओर त्वरा से आये। निशेश पर से निकलते हुए मेघ खड उन वीचियों की भाति लग रहे थे जो अपनी उत्ताल तरंगो से तरणियों को अपने मे समावृत कर लेते है।

दीर्घकाल से दुर्गादास अनिमेष दृष्टि से प्रकृति की इस छटा को निरख रहे थे।

'रसोडा' उठ गया था।

धीरे-धीरे उनके आस-पास उनके पुत्र मेहकरण, अभयकरण और पौत्र अनूपसिंह आ गये।

अनूपसिंह ने पूरे सोलह वर्ष पूरे कर लिये थे। यह जानकर दुर्गादास

के पाव दवाने लगा । दुर्गादास उसे देखकर भर-भर आये । जीवन के संघर्ष की अनंत महायात्रा में उन्हें बहुत ही कम ऐसे अवसर मिले थे, जब वे अपने सम्पूर्ण परिवार के संग शांति से रहे हों ।

अनूपसिंह ने पाव दाबते-दाबते कहा, "बादशाह ने आपको इतनी दूर क्यों भेज दिया है दादा सा, मेरा मन यहां नहीं लगता ।"

दुर्गादास के मुख पर शीशे के एक कलात्मक लैम्प का धुंधला-धुंधला प्रकाश पड रहा था। उनकी दाढी और सिर के बाल श्वेत हो गये थे । सहज स्वर मे बोले, "बेटे, बादशाह हमे मारवाड से दूर रखना चाहता है। वह जानता है कि राठोड दुर्गादास यदि मारवाड मे रहा तो वह फिर राठोडो मे विद्रोह के बीज बोयेगा । हमे सतायेगा । बेटा ! यह ठीक भी है कि अच्छे सेनापति के बिना कोई भी सेना विजयी नहीं होती ।"

"पर आपकी अब तो उनसे मित्रता हो गयी हैं ?"

"यह सब परिस्थितियो के खेल हैं। राजनीति हर क्षण एक नया रूप बदलती हैं । वह बहुरूपिया है । किस भेष मे कब आकर छल जाय और कब आकर प्रेम कर जाय, कोई नही जानता । इसलिए हर व्यक्ति को जो स्वतन्त्रता और सत्य का पहरुवा है, उसे कदम उठाने के पहले अपने आपकी अग्नि-परीक्षा कर लेनी चाहिए ।"

अभयकरण ने पूछा, "शुजातखा की मृत्यु के पश्चात शाहजादा मुहम्मद आजमशाह की गुजरात पर जो नियुक्त हुई है, वह क्या परिवर्तन नहीं लायेगी ?"

दुर्गादास कुछ क्षण मौन रहे । फिर गभीर स्वर मे बोले, "वह मिजाज का तेज और स्वाभाव का घमडी है । हमे उससे और सावधान रहना चाहिए ।"

इसी तरह वार्तालाप चलता रहा । रात्रि विश्राति चाहने लगी । सभी लोग चले गये ।

दुर्गादास की पत्नी आयी । पति के चरण स्पर्श करके वह उनके पलंग के पायताने बैठ गयी ।

जब कभी एकांत में वे दोनों मिलते थे, दुर्गादास एक ही पश्चाताप करते, "क्षत्राणी ! हमने आपको एक पति का सुख नहीं दिया । आपसे शांति से बैठ कर सुख दुख की दो बातें ही नहीं कीं ।"

तेजस्वी वीरांगना उत्साह में कहती, "अन्नदाता, मुझसे बड़ी कौन भाग्यशालिनी होगी ? भरा-पूरा परिवार । मैं कहती हूँ—जब आपके यश के गीत गाये जाते हैं तब मेरा सीना गर्व से फूल जाता है । मां दुर्गा से हाथ जोड़ कर यही विनती करती हूँ कि मुझे हर जन्म में आपके चरणों की दासी बनाए ।"

दुर्गादास एक सुख-स्वप्न में विस्मृत हो जाते थे । सोचते थे कि वस्तुतः इस नारी ने कभी सुखकारी निद्रा नहीं ली । वह सदा चिनगारियों के दुरूह पथ पर चली ।

"ठकुराणी !"

"हाँ, अन्नदाता !"

"मैं यह चाकरी छोड़ना चाहता हूँ ।"

"क्यों ?"

"इस चाकरी से मुझ में अकर्मण्यता आ रही है । इस बूढ़ी अवस्था में मखमली शय्या पर मरना, यह मुझे शोभा नहीं देता । फिर मुझे अपने गुप्तचर ने बताया है कि बादशाह महाराजा से [illegible] रहे हैं ।"

ठकुराणी ने एक बार नभ की ओर देखा । फिर बोली, "मुझे सुख की चाह नहीं है अन्नदाता ! हमारा धर्म है कि पति की इच्छा के लिए अपना सब कुछ बलिदान करना । ... आप जो [illegible] [illegible] [illegible] रहे हैं ।"

"अपने निजी स्वार्थ और सुख के लिए हम मारवाड मे प्रज्वलित हो रही क्रांति ज्योति को बुझा देंगे ? मुगल-साम्राज्य की समाप्ति निरन्तर सघर्ष से ही हो सकती है और हम यहा बैठ कर मारवाड को नही जगा सकते ।"

"आपकी इच्छा हो तो हम कल ही मारवाड की ओर प्रस्थान कर दे । हमे सुख से मोह नही ।"

दुर्गादास प्रशसात्मक स्वर मे बोले,"आप कितनी वीर-धीर नारी हैं । राजपूतो की वीरता के पीछे यदि कोई सही आधार है, तो वह है–उनकी त्यागमयी स्त्रिया ।"

ठकुराणी उनके चरणो पर अपना मस्तक रख कर भर्राए स्वर मे बोली, "ये सब इन चरणो का पुण्य प्रताप है । इन्ही चरणो मे प्राण निकले, बस यही प्रभु से अरदास है ।"

दुर्गादास ने क्षत्राणी के सिर को सहलाते रहे । क्षत्राणी उनके चरणो मे ही सो गयी । दुर्गादास की भी सोचते-सोचते आख लग गयी ।

प्रभात पत्यूष के प्रथम दर्शन पर दुर्गादास मदिर की अर्चना-वन्दना से निवृत हुए । बैठकखाने मे बैठे ही थे कि उनके पुत्र मेहकरण ने आकर कहा, "ठाकुर सा ! शाहजादा मुहम्मद आजमशाह का सिपाही उनका एक 'निशान' लेकर आया है ।"

"उसे अतिथि-गृह मे ठहराओ ।" पावणे को किसी भी प्रकार का कष्ट नही होना चाहिए । "निशान यहीं पर ले आओ ।"

निशान ! शाहजादे ने एक लिखित सदेश भेजा था । उसमे दुर्गादास से अनुरोध किया गया गया था कि किसी अत्यावश्यक कार्य के कारण आप तुरन्त अहमदाबाद उपस्थित हो ।

दुर्गादास ने उस निशान को गौर से पढा । सिर्फ उपस्थित होने के अतिरिक्त कोई महत्वपूर्ण कारण नही । उनके अनुभवी जीवन से उस निशान मे आने वाली किसी प्रपच की गध छुपी नही रह सकी ।

उन्होंने तुरन्त अपने विश्वस्त साथियों–राठोड रघुनाथ, भाटी दुर्जनसिंह राठोड मोकमसिंह, पुत्र मेहकरण, अभयकरण और पौत्र अनूपसिंह को आमन्त्रित किया । उस निशान पर गभीरता विचार-विमर्श करके यह निर्णय लिया गया, "हम सर्व प्रथम अपना एक गुप्तचर वहां भेजें । वह सही स्थिति का पता लगाकर रखेगा । हम जैसे ही पीछे–पीछे पहुंचेंगे वह हमें इस आमन्त्रण की सत्यता बता देगा ।"

यह राय सबको पसंद आ गयी ।

पत्रवाहक को भेज दिया । राठोड दुर्गादास ने लश्कर सहित अहमदाबाद की ओर प्रस्थान किया । साबरमती नदी के किनारे करीज नामक गांव में उन्होंने अपना डेरा जमाया ।

उस दिन एकादशी थी । राठोड दुर्गादास के व्रत था । काफी देर तक जप–तप करते रहे । शाहजादे की ओर से बार–बार दूत आ रहा था ।

दुर्गादास ने रुष्ट होकर कहा, "शाहजादे साहब को कह दीजिएगा कि दुर्गादास अपने जप-तप तथा भोजनादि से निवृत होकर ही आपके दरबार में उपस्थित होगा । बार-बार अपने दूत न भेजें ।"

वस्तुतः दुर्गादास को अपने गुप्तचर की प्रतीक्षा थी । अभयकरण ने आकर कहा, "हमारा आदमी भी आ गया है"

"उसे हमारे पास भेजो ।"

गुप्तचर आया । विचित्र भेष में । वह नितान्त पुराना-सा कोई सिपाही-सा लगता था ।

"समाचार क्या है ?"

"अन्नदाता ! वहां [illegible] ने आपको कत्ल करने का बीड़ा उठाया है । उसके साथ चुने हुए और भी हैं ।"

"क्या ?"

"वह सिपाही कह रहा था कि बादशाह का ऐसा आदेश है । [illegible]

दुर्गादास को समाप्त करके मारवाड के विद्रोह को सदा के लिए समाप्त करना चाहते हैं ।"

"थू है ऐसी बादशाहत पर !" दुर्गादास ने घृणा से कहा,"किसी तरह के वचन-पालन की क्षमता नही । इतना अविश्वास और धार्मिक अंधता लेकर कोई भी शासक अपने को लोकप्रिय और सच्चा साबित नही कर सकता । फिर भी हमे घबराना नही चाहिए । सफदरखा और शाहजादे दोनो की छातियो पर साप ही लोटेंगे !...अच्छा, यहा से वापस चलने की तैयारिया की जाय ।"

इधर पुन: प्रस्थान के लिए दुर्गादास के सैनिक तत्पर होने लगे। उधर शाहज़ादा अपने दरबार मे अपने सिपाहियो सहित दुर्गादास को कत्ल करने के लिए क्षण-क्षण उद्विग्न हो रहा था ।

अपने सिहासन पर आसीन शाहजादा कह रहा था, "यदि दुर्गादास अपने कब्जे मे आ गया तो जहापनाह हमारी मुंह मागी मुराद पूरी कर देंगे ।"

बाबी ने कहा, "शाहजादे साहब, दरबार मे आने दीजिए । आज दुर्गादास अपने चगुल से बचकर नही जा पायेंगे ।"

जब ऐसी बाते चल रही थी कि उसी समय एक सिपाही ने आकर आकुल-स्वर मे कहा, "गजब हो गया शाहजादे साहब ?"

"क्या ?" वह एकदम चौक पडा ।

"दुर्गादास जी भाग गये ।"

"क्या बकते हो ?"

"मैं ठीक कह रहा हू । मै अपनी आखो से देखकर आ रहा हू ।"

शाहजादा विप्रलाप कर उठा, "सफदर खा, उनका पीछा करो। अफजल खा तुम भी जाओ ।"

मुगल सेना ने तीव्र गति से उनका पीछा किया ।

धूल के बादल आकाश पर छा गये । मुगलों की विशाल सेना ने भी उनका पीछा किया ।

समीप आती हुई मुगल सेना को देखकर उनके पोते अनूपसिंह ने अभिमन्यु की भांति गर्जना करके कहा, "दादा सा, आप आगे जाइए। मैं मुगल सेना को रोकता हूं ।"

"तुम ?" विस्मित हो गये दुर्गादास ।

"क्यों, क्या मैं शत्रु सेना को रोक नहीं सकता ?"

"बेटे ! अभी तुम बहुत छोटे और नादान हो ।"

"क्षत्री का बेटा, क्या छोटा और क्या मोटा ? जब अभिमन्यु मां के गर्भ में चक्रव्यूह भेदन सीख सकता है, फिर मैं क्या शत्रु-दल का संहार नहीं कर सकता ?"

मेहकरण ने अनूपसिंह की बात का समर्थन करके कहा, "अनूप ठीक कहता है ठाकुर सा ! आप शीघ्रता से पाटण पहुंच कर परिवार को लेकर मारवाड़ जाइए । हम सभी यहीं पर मुगल सेना से लोहा लेकर उसके दांत खट्टे करते हैं ।"

राठौड़ हरनाथ ने भी मेहकरण की बात का समर्थन किया। दुर्गादास अपने चन्द सैनिकों के साथ चल पड़े ।

राठौड़ी सेना ने वहीं पर मोरचाबन्दी की । मुगल सेना के सफदर खां बाबी व अन्य सरदार अपमान की आग में जले हुए थे ही । उन्होंने पूरी शक्ति और रण-कौशल से लड़ना शुरू किया ।

राठौड़ों ने उनका डट कर सामना किया । गोल के प्रथम [illegible] के दर्शन करने वाले अनूपसिंह की वीरता और शौर्य देखते बनता था । उनका खड्ग यमदूत की भांति शत्रुओं को मृत्यु प्रदान कर रहा था । [illegible] अपना [illegible] शत्रु-शोणित [illegible] दिखाता था । अनूप [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] । [illegible] [illegible] । [illegible]

अनूप के दुस्साहस को देख लिया। वह लगभग पचास चुने हुए सिपाही लेकर अनूप के पास गया। दुष्ट कौरवों की भांति मुगलों ने अनूप रूपी अभिमन्यु को घेर लिया। पर अनूप कहा भयभीत होने वाला था। अपने दादा का पराक्रम और उत्सर्ग उसमे भरा था। शत्रु को सहार करता रहा और अंत में वह आहत हो गया।

राठोड़ी सेना के के पाँव और जम गये। अभयकरण ने अनूप को घिरते हुए देख लिया था। उसने पूरी शक्ति से उस घेरे पर आक्रमण किया।

सफदर खा का पुत्र मुहम्मद अशरफ गुरनी इस बार सख्त रूप से आहत हुआ। उसको मार्मिक आघात लगे। सफदर खाँ अपना कर्तव्य विस्मृत कर अपने पुत्र को सभालने लगा। इसी बीच मेहकरण, अभयकरण और भाटी दुजर्नसिंह ने आहत अनूप को उठा लिया। उसके तन से रक्त प्रवाहित हो रहा था। असख्य घाव लगे थे। उसे युद्ध पंक्ति से एक ओर लाया गया।

उसने अचेतावस्था मागा, "पानी!"

तुरन्त उसे पानी पिलाया गया।

अनूप ने अपनी आँखें खोली। स्वजनो को अपने सन्निकट देख कर वह उत्साह से बोला, "काका सा, दादा, सा अपने घर वालो को लेकर चले गये न?" हाला कि मेहकरण को इसका जरा भी ज्ञान नहीं था फिर भी उसने अनूप को सात्वना देने के लिए कहा—

"हा-हा, वे बहुत दूर निकल गये है। "अभय मेरी इच्छा है कि अनूप को यहा से ले चलना चाहिए।"

"नही-नही, आप मेरी चिंता मत कीजिए काका सा! आप शत्रु को रोकिए।" बोलने के साथ ही अनूप के मुह से रक्त की धारा सी बह निकली। अभयकरण का हृदय भर गया। मेहकरण की आत्मा कराह उठी। कितना प्यारा बेटा था? राजा बेटा! जीवन के स्वर्णिम क्षणों तक आते-आते यह अपनी इहलीला समाप्त कर रहा है।

अल्लाहो अकबर का नारा सुनाई पडा ।

"शत्रु क्या आगे बढ रहा है ? काका सा, आप जाइए, मेरी चिंता न कीजिए । वीर रण भूमि मे इसी तरह वीर गति पाते जाइए··· हर हर माहदेव ··।"

राजपूतो ने भीम गर्जना की–हर-हर माहदेव —! की आकृति एक जीवट भरी हसी मे डूब गयी । वह बुदबुदा हर–हर महादेव ·· हर–हर महादेव ··· हर · हर ··महा ··

सास टूट गयी । धूल की काया धूल धूसरित हो गयी । प्रा महाप्राण के विराटत्व मे लीन हो गये । करुणा का उद्रेक सर्वत्र फू पडा । मृत्यु का सगीत क्षणो के लिए सघर्ष रत वीरो की हुंकारो औ तलवारो की झकारो से गु'जरित हो गया । एक यौवन मर गया । मुगलिया खानदान की दुष्टता के कारण एक बार फिर एक शमन-देवता मर गया !

मेहकरण और अभयकरण अपने लाडले का अन्तिम दर्शन करके पुन युद्ध रत हो गये। मुगल बार–बार अपनी सम्पूर्ण शक्ति से आक्रमण करते थे पर राठोड चट्टान बन गये । अडिग–अखड प्राचीर !

दिवस रक्त स्नान करके क्षितिज को करुणा का सगीत सुना कर आहत सा अस्त हो गया । सांझ शोकार्त करती हुई मृत्यु अक मे सुसुप्त योद्धाओ को सहलाती हुई आयी ।··· कदाचित वह पराजित राठोड वीरो की स्तुति-वन्दना करेगी जिन्होने मुट्ठी भर होते हुए भी पूर्ण–दिवस शत्रुओ को आगे न बढने के लिए विवश किये रखा ।

× × ×

१६

दुर्गादास उसी रात्रि पाटण पहुँच गये । उन्होने अपने समस्त
ारिवार व सम्पति को रथो, ऊटो, घोडो पर लादा और उन्हे वहा से
ास्थान करा दिया । उनका परिवार 'सिवाणा' चला गया और वे
वय 'थराद' गाव की ओर चले गये ।

थराद मे उन्हे यह पता चला कि उनका पौत्र इस युद्ध मे मारा
ाया है तब वे विचलित हो गये । उन्हे पहली बार ऐसा अनुभव हुआ
क वे अशक्त हो गये हैं । उन्हे सचमुच वृद्धावस्था आ गयी है । पौत्र
निधन के आघात को वे सह नही सके । एक-दो दिन वे शय्या पर
डे रहे । तभी उसी गाव का एक चारण आया । उसने राठोड की
शसा मे दोहे कहे, "हे मा वसुन्धरा के सपूत · आप ही शौर्य के शेष
ाग हैं । आपके ही विशाल स्कधो पर सत्यता की धरा टिकी हुई है ।
दि आप ही अपने कर्तव्यो को विस्मृत करके निद्रा के आचल मे छुप
ायेंगे तो कौन शत्रुओ का विनाश करेगा ? हे पृथ्वी पुत्र ! जागो
जा मे जागरण का मत्र फूको ! स्वतन्त्रता के गीतो से दिग्दिगन्त
ानित-प्रतिध्वनित करदो । स्वय को जागृत करो··· ··और जनता
नार्दन को जगाओ ! जागो · जागो · हे वीर प्रवर !"

दुर्गादास का रोम–रोम जाग गया। इन ओजस्वी दोहा ने उनकी आत्मा को चिन्मय कर दिया। उन्होंने चारण को पुरस्कार देकर कहा, "आप जैसे ही देश–भक्त लोगों ने हम वीरों को समय-समय पर अपने कर्तव्य को स्मरण कराके देश के गौरव को अक्षुण रखा है। हम वीर आप जैसे कवियों के सदा कृतज्ञ रहेंगे।"

और उसी समय दुर्गादास ने महाराजा को पत्र लिखा–
स्वस्ति श्री गाव थराद शुभ सुथाने सेवक दुर्गादास राठोड योग्य महाराजा श्री अजीतसिंह सजी लिखावतु कि बादशाहा री नीयत चोखी नहीं, इण वास्ते आप हुशियार रवोला मैं आप सू वेगो ईज मिलण वालो हूँ।

पत्र को अपने विश्वासी सेवक द्वारा महाराजा को भेज कर एक बार फिर उन्होंने अपनी जन्मभूमि की स्वतन्त्रता का महा मंत्र फूंका। वे एक ही बात कहते—हमें मुगलों को मारवाड़ प्रदेश से बाहर करना है।"

फिर वही स्वतन्त्रता संग्राम! चरैवति चरैवति स्वाधीनता हेतु चलना····· निरन्तर चलना! रात दिवस चलना!

× × ×

१७

एक निर्जन स्थान ।

दुर्गादास जीवन समुद्र के छोरो पर खडे थे । आज फिर वे असीम शाति का परित्याग करके पुन देश की मुक्ति हेतु तत्पर हो गये ।

महाराजा अजीतसिह भी वही पर आ गये । दोनो ने मिलकर यत्र-तत्र-सर्वत्र लूट-खसोट और मुगलो को परेशान करना शुरू किया । लेकिन इस वार कोई विशेप फल नही मिला। फलस्वरूप महाराजा ने चुपचाप दुर्गादास को विना पूछे ही वादशाह के पास सधि–पत्र भेज दिया ।

इस सधि–पत्र के वारे मे जव दुर्गादास को विदित हुआ तव वे क्रोधित हो उठे । उनके मुख से वस ये ही शव्द निकले, "ऐसे कर्तव्यहीन राजा कभी प्रजा का हित नही कर सकते । कभी मुक्ति को प्राप्त नही कर सकते ।"

और दुर्गादास एक वार फिर निराशा के महा समुद्र मे गोते लगाने लगे । वे सोचने लगे कि वे ही क्यो विफल पीडन भोग रहे हैं । वे ही क्यो अपने सुख-सतोप और कौटुम्बिक आनद से वचित रह रहे हैं । दुर्गादास अत्यन्त व्यथित हो उठे ? वे उद्विग्नता के

त्वरापूर्वक लम्बे-लम्बे डग भरने लगे । उन्हे प्रतीत हुआ कि उनके औदार्य का लोग अनुचित लाभ उठाते है । वे आत्मदाह मे जल उठे ।

उन्ही दिनो जबरदस्त खा लाहौर से बदल कर जोधपुर का हाकिम नियुक्त हुआ । वह नीति-निपुण और रणवीर था । उसने दुर्गादास की वीरता के बारे मे अनेक गाथाए सुनी थी । शौर्य और औदार्य दोनो की उनमे समता पाकर जबरदस्त खा ने राठोड दुर्गादास को परोक्ष रूप से आत्म समर्पण करने का परामर्श दिया । उसने कई राठोडो को उनके पास भेजा और कहलाया कि वह अब भी उनके सारे दोष क्षमा करा सकता है, यदि वे बादशाह से क्षमा मागले ।

अजीतसिंह जी के व्यवहार से दुर्गादास व्यथित थे ही । चिढे हुए भी थे अत उन्हे एक ऊब और व्यर्थता सताने लगी । आवेश मे उन्होने बादशाह को एक सन्धि-पत्र लिख दिया और अपने अपराधो की क्षमा माँग ली ।

बादशाह ने अपनी क्षीण होती हुई शक्ति के लिए वीर दुर्गादास के इस पत्र को खुदा का पैगाम समझा । उसने तुरन्त दुर्गादास की गुजरात मे पुन नियुक्ति कर दी ।

पुन शान्त जीवन ।

किन्तु दुर्गादास की आत्मा को तुष्टि कहा ? वही उद्विग्नता, वही मातृभूमि के लिए ललक । मुक्ति की अनिवार और दुर्दान्त लालसा उनके हृदय को अहर्निश बीध रही थी । उनकी इच्छा होती थी कि वे समस्त मरु-प्रदेश के एक एक कण को मुक्त कराके अपने स्वामी की आधीनता मे दे दे । अपनी असि की अनवरत मार से स्वाधीनता का सग्राम करे । इन्ही ऊहापोह मे उनका मन उद्भ्रान्त हो जाता था और वे विकलता की परिसीमा को लाघ कर मन ही मन रो पडते थे ।

जरा अवस्था । मातृभूमि की मुक्ति की कामना । वही सदा सदा क्षण भर का विश्राम-विराम ।

वे एकान्तिक क्षणो मे गवाक्ष मे खडे हुए सुदूर तक विस्तृत निरभ्र नभ को देखते रहते थे।

काल की गति शाश्वत है। एक क्षण भी रुके बिना वह निरन्तर चलती रहती है।

दुर्गादास अपने वार्ता-कक्ष मे बैठे हुए अपने सरदारो से अपने मन की पीडा को बता रहे थे, "मैं यहा नही रह सकता हूँ सरदारो! यहा सभी तरह की समृद्धि पाते हुए भी मैं अपने आपको दीन समझ रहा हू। सबको हाथ का उत्तर देते हुए भी मुझे ऐसा लगता है कि मै एक याचक हू। ओह! मने क्रोध और आवेश मे यह क्या कर दिया?"

तभी एक सवार भागा हुआ आया।

उसने इसी पल दुर्गादास से मिलने का अनुरोध किया। उसने सिर झुका कर कहा, "अन्नदाद! बादशाह सलामत आलमगीर का देहान्त हो गया है।"

"क्या कहते हो?"

"सच कह रहा हूँ, बादशाह इस ससार से चले गये है।"

दुर्गादास ने चद क्षणो के लिए ईश्वर से प्रार्थना की फिर अपने सरदारो से कहा, "एक कट्टर पथी, धर्म का अधा अनुरागी और प्रजा के प्रति कर्तव्यहीन बादशाह औरगजेब मर गया।"

तुरन्त दुर्गादास ने अपने राठोड सरदारो से गुप्त-मत्रणा की।

दुर्गादास बोले, "अब हमे क्या करना चाहिए? यह अवसर जोधपुर पर कब्जा करने का बहुत ही अच्छा हैं। हमे महाराजा की सहायता के लिए शीघ्र प्रस्थान कर देना चाहिए।"

एक राठोड सरदार ने कहा, "यह ठीक नही रहेगा। हमे सर्व प्रथम स्थिति का अवलोकन कर लेना चाहिए। यह देखना चाहिए कि उन्हे हमारी किस प्रकार की सहायता की आवश्यकता है।"

"आप ठीक फरमाते हैं।" तुरन्त महाराजा को सूचना देदी गयी।

दुर्गादास महाराजा के सदेश की प्रतीक्षा करने लगे।

उधर अजीतसिंह जी ने औरंगजेब की मृत्यु का समाचार पाकर तुरन्त समस्त सबल-सहयोगियों को संगठित किया और जोधपुर पर आक्रमण कर दिया।

इधर नायब फौजदार जाफरबेग के पास बादशाह की मृत्यु के समाचार आ गये थे। उसका साहस भी जाता रहा और वह तुरन्त ऊटों पर सवार होकर भाग गया। उसकी दो बेगमे रह गयी थी जिन्हे महाराजा ने सुरक्षा से उसके पास पहुँचा दिया।

दुर्गादास के पास जब इस विजय के समाचार पहुँचे। तब उस उदात्त वीर ने गरीबों को दान-पुण्य किया। खुशियाँ मनायी। पुरस्कार बाटे। उन्हे लगा कि आज उनके वर्षों का स्वप्न पूरा हुआ है। आज उनका अथक सघर्ष और त्याग फलीभूत हुआ।

उन्होंने अपने राठोड सरदारों को एकत्रित करके कहा, "अब मै यहा से अति शीघ्र ही जाना चाहता हू। अपनी जन्मभूमि को स्वाधीन देखने के लिए मेरे नेत्र वर्षों से तरस रहे है। जब मै जोधपुर के सिंहासन पर महाराजा को देखूंगा तब मुझे अपनी वह गोद याद आयेगी— जिसमे कभी वे शोभा पाते थे। ये बाजू याद आयेंगे जिन पर वे रात-दिन उस आततायी बादशाह के कारण सुरक्षित अवस्था मे लटका करते थे।

कितना अन्तर होगा ?
जीवन दर्शन के दो स्पष्ट पहलू !
अपनी भूमि पर ही मारा-मारा फिरना और
अपनी ही भूमि पर सर्वाधिकार !
दुर्गादास पुलकित मन अपनी मातृभूमि की स्मृति मे खोए रहे।

अब उनका मन यहां एक पल भी नहीं लग रहा था ।
वे जायेंगे ।
शीघ्र, जितनी शीघ्रता हो सके—
वे जोधपुर जायेंगे ।

१८

जितना हर्षोल्लास महाराजा के जोधपुर राज्य को प्राप्त करने का
ा को हुआ, उतना राठोड वीर वर श्री दुर्गादास के जोधपुर आगमन
: हुआ । राठोड सरदारों और प्रजा ने उस स्वतन्त्रता संग्राम प्रेमी
ादास का हार्दिक अभिनन्दन किया । ग्राम-ग्राम पर, डगर-डगर पर,
र-नगर पर दर्शकों की अपार भीड एकत्रित हो गयी और दुर्गादास
अगवानी में पुष्प वर्षा करने लगी । राठोड की जयकार से
दिगन्त गुंजायमान होने लगा ।

राणा प्रताप ने स्वाधीनता की रक्षा हेतु जो कष्टपूर्ण जीवन
न किया था, उससे भी कठोर जीवन व्यतीत किया वीर वर दुर्गादास
। अपने स्वामी हेतु इतना महान बलिदान ! नत हो गयी प्रजा

की ग्राखे ।

भाडेलाव तालाब के सन्निकट तम्बू तन गयें । वन्दनवारों ग्रौर झंडियो से सारा पथ सज्जित किया गया । राठोड दुर्गादास वहीं पर ठहरे ।

चपावत हरनाथसिंह के साथ महाराजा ने कहलाया "हम स्वय उनके स्वागत हेतु तालाब के पास जायेंगे । उस परम वीर का सम्मान राजवशीय राठोड जितना करे उतना थोडा ।"

दुर्गादास को इससे असीम सतुष्ट का अनुभव हुआ । उनके नेत्र भीग गयें । उन्हे प्रतीत हुआ कि उनकी तपस्या सफल हो गयी । यह गौरव ग्रौर गरिमा किसे मिलती है ? इस शुभ अवसर पर दुर्गादास का परिवार भी उपस्थित था । क्यो न, अभिमन्यु सा वीर अनूपसिंह याद न ग्राये ? दुर्गादास अपने कुटुम्ब को देख कर भर ग्राये ।

मेहकरण ने पूछा, "ठाकुर सा, आप उदास क्यो हो गये ?"

"बेटा, मुझे अनूप की याद ग्रा गयी । ग्राज वह यह दृश्य देखता तो कितना गर्व से फूलता ? कितनी कच्ची उम्र थी ? कितना ग्रोजस्वी मुख था उसका । जितने रोम उतने घाव ! भगवान उसकी ग्रात्मा को शाति दें ।"

मेहकरण भी उदास हो गया ।

महाराजा की सवारी किले से रवाना हुई ।

हाथी के हौदे पर स्वर्ण सिंहासन पर महाराजा विराजमान थे । प्रजा जयजयकार कर रही थी । पुष्प बरस रहे थे । महाराजा के पीछे घुडसवार, पैदल सेना ग्रौर अनेक रथ ग्रौर पालकियां सजी हुई थी ।

नगाडची नगाडा बजाता हुग्रा ग्रागे-ग्रागे चल रहा था ।

उनके संग जोधपुर के उच्च ठिकाणे के ठिकाणेदार थे ।

जब महाराजा तालाब के पास पहुंच कर हाथी के हौदे से उतर

तब जय के उद्घोष से आकाश गूंज गया ।

दुर्गादास ने सिर झुका कर अभिवादन किया । उनके सम्मान मे जयकार की । ग्यारह रुपये भेट किये । कहा, "आज मेरी आत्मा को सन्तोष हुआ है । अब मैं मर भी जाऊं तो मुझे कोई दुख नही नही ।"

महाराजा ने उनके सम्मान मे कहा,"आप ही इस राज्य के सच्चे 'धणी' हैं । आपके पुण्य-प्रताप से आज यह मुकुट मेरे माथे पर है ।"

महाराजा ने दुबारा दुर्गादास से सूरसागर के डेरे पर भेट की । वे दुर्गादास को अपने से अधिक सम्मान देना चाहते थे । दुर्गादास ने ने उन्हे दो घोडे भेट किये । असली सिंधी अश्व थे । लूटपाट के दिनो मे उन्होने सिंध से वे घोडे-घोडिया प्राप्त की थी । ये दोनो घोडे उन्ही के वशज थे । महाराजा उन घोडो को देख कर बडे प्रसन्न हुए और उन्होंने भी दुर्गादास को एक घोडा और सिरोपाव दिया ।

दुर्गादास के जीवन मे स्थिरता आ गयी । आयु ने भी अपना प्रभाव दिखा दिया था । वे शाति से रहने लगे और महाराजा के हर काय मे उनकी राय को प्राथमिकता दी जाती थी ।

× × ×

१९

मुगल साम्राज्य के अत्याचारों से पीड़ित और उनकी अनेक मंत्रणाओं को स्मरण करके महाराजा अजीतसिंह विक्षुब्ध हो उठे। उनमें प्रतिशोध की ज्वाला प्रज्ज्वलित हो उठी।

उन्होंने बादशाह औरंगजेब के समय बनायी हुई सभी मस्जिदों को खंडित करा दिया और आज्ञा दे दी कि कोई भी मेरे राज्य में आजान न दे।

दुर्गादास ने उन्हें समझाया, "राजाजी, इस प्रकार की धार्मिक अंधता एक निपुण राजा के लिए श्रेष्ठ नहीं होती। उदारता भी राजा का एक आभूषण होता है।"

महाराजा ने उत्तेजित होकर कहा, "भारतीय शासकों ने अपनी अति उदारता की नीति से सदा अपना अहित किया है। बिना प्रतिशोध भय उत्पन्न नहीं होता। बिना तलवार आतंक नहीं होता।"

"माना। पर भय ही क्रोध की जननी होता है। क्रोध बुद्धि का शत्रु! इस हेतु सदा ऐसा कदम उठाइए जिससे भयमुक्त और संदेह मुक्त शत्रु हाथ लगे। उनको पराजय देना अति सहज और सरल होता है।"

पर अजीतसिंह जी ने किसी की नही सुनी। बादशाह के राज्याभिषेक के समय उन्होने अपना कोई प्रतिनिधि भी नही भेजा। शाहआलम बहादुरशाह इससे क्रोधित भी हो गया। उसने तुरन्त अपनी सेना को जोधपुर की ओर प्रस्थान करने की आज्ञा दे दी। पहले वह जयपुर के अनधिकृत राजा विजयसिंह के पास आवेर गया जहा उसने अपने दोनो शाहजादो को जोधपुर पर चढाई के लिए भेजा।

बादशाही सेना ने एक बार फिर जोधपुर पर शाही पताका फहरा दी।

दुर्गादास को पुन अपनी कमर कसनी पडी।

उनके साथ विद्रोही राजा जयसिंह भी मिल गये।

एक बार फिर विषम स्थिति उत्पन्न हो गयी।

दुर्गादास फिर गुरिल्ला युद्ध पद्धति का आह्वान करने को तत्पर हुए। तभी वजीर मुनइम खा के अनुरोध पर अजीतसिंह जी बादशाह के समक्ष प्रस्तुत हुए किंतु किसी ठोस सुफल की प्रतीति नही हुई अत. महाराजा जयसिंह और राठोड दुर्गादास उदयपुर की ओर प्रस्थान कर गये।

सर्व प्रथम वे देवलिया पहुँचे। रावत प्रतापसिंह ने उनका राजकीय सम्मान किया। वही से महाराणा को सूचना भिजवा दी गयी। महाराणा अमरसिंह स्वय उदय सागर की पाल पर जाकर उनके आदर हेतु ठहरें।

ज्यो-ज्यो महाराजा, जयसिंह जी और दुर्गादास उदयपुर के निकट आते गये त्यो-त्यो अमरसिंह जी का धैर्य जाता रहा। विलम्ब का एक-एक क्षरण उनके लिए असह्य हो उठा। अत मे वे दूसरे दिन गाडवा गाँव तक गये। स्वागत की विशद् तैयारिया हुई। शिविरो मे आमोद-प्रमोद का समुचित प्रवन्ध था।

जब महाराजा, जयसिंह जी और दुर्गादास वहाँ पर पहुँचे तव

दुर्गादास का भी उतना ही आदर किया गया, जितना महाराजा अजीत सिहजी का हुआ। पता नहीं, वह कौन सा पल था कि निमिष भर के लिए महाराजा मे ईर्ष्या की भावना का उदय हुआ और त्वरा के सग महाराजा के मन-सागर मे यह विचार-वीचि वावित हो गयी कि राणा जी को राठोड दुर्गादास को हमारे समकक्ष का सम्मान नहीं देना चाहिए।"

परन्तु ऊपर मे वे मुसकराते रहे। उन्होंने अपनी आंतरिक ईर्ष्या को, जलन को आकृति पर नही आने दिया।

फिर वहा से उनका लश्कर उदयपुर की ओर रवाना हुआ।

राजमहल मे अतिथि सज्जनो को ठहराया गया। महाराजा अजीतसिह जी कृष्ण विलास और जयसिह जी ऋतु विलास मे ठहरे।

सिन्दूरी साझ शृग-श्रेणियो पर नवविवाहिता कुलवधू की भाँति हौले-हौले अवतरित हो रही थी। झीलो के शात-स्थिर जलो मे गढो के गवाक्षो मे ज्वलित दीपो के प्रतिबिम्ब पडने लग गये थे। शीतल मद समीर गढ-कगूरो का स्पर्श करती हुई झील की वीचियो को तरगायित करती हुई राठोड दुर्गादास के शात मन को आत्म विस्मृत और विभोर कर रही थी।

सभी अतिथि गण आमोद प्रमोद मे निमग्न थे। केवल राठोड दुर्गादास प्रकृति के अद्‌भुत परिवर्तन को देखने मे खोये हुए थे कि प्रतिहारी ने आकर निवेदन किया कि राणा जी आपको याद फरमा रहे हैं।

दुर्गादास राणा के निजी कक्ष मे गये। राणा जी ने उन्हे आदर से बिठाते हुए कहा "दुर्गादास जी, हम आपके बहुत ही आभारी हैं। आपने दो बार उदयपुर को आपसी वैमनस्य और गृह कलह से बचाया था।"

दुर्गादास ने इन प्रशसात्मक शब्दो की ओर ध्यान न देकर कहा, मेरी एक ही अभिलाषा है कि समस्त राजपूतों की सगठित शक्ति का और

एक हिन्दू राज्य की स्थापना हो। मुझे विश्वास है कि राजपूतो के एकत्रित होने पर मराठे भी उनमे सम्मलित हो जायेंगे। और फिर ससार की प्रत्येक शक्ति उनके-प्रभुत्व को मानेगी। किंतु मेरा यह स्वप्न-स्वप्न ही रहेगा। हिन्दू जाति मे निम्न स्वार्थो की बहुलता आ गयी है। वे व्यक्तिगत रूप से अधिक सोचते है। समय पडने पर या किसी नाजुक स्थिति मे वे तुरन्त लालच मे आकर गद्दारी कर जाते हैं। ' राणा जी, मैं आपको कहता हू कि यह समस्त आर्य जाति के लिए दुर्भाग्य की बात है कि उन्ही के घर मे पराये स्वामी हो। इस तरह पराधीनता के रात-दिन बढते ही जायेंगे।"

वर्चस्वी-दुर्गादास ने देखा-राणा जी का मुँह उत्तर गया है। कदाचित वे आत्मा ग्लानि मे डूब गये है। ' राणा प्रताप के एकनिष्ठ कर्तव्य की उन्हे याद हो आयी हो। पश्चाताप भरे स्वर मे बोले, "आप ठीक कहते हैं। हम राजाओ तथा राणाओ ने सदा ही गलत कदम उठा कर सम्पूर्ण राष्ट्र का अहित किया है।"

"फिर विवेक का परित्याग इतना जल्दी करते हे कि कहा नही जाता। सूझ-बूझ और चतुराई तो इनकी उसी समय जाती रहती है जब इन्हे सिहासन पर बिठाया जाता है। खैर! हम इन बातो मे अभी क्यो उलझें? कहिए, अभी कैसे बुलाना हुआ?"

"यही पूछने की आपको कोई कष्ट तो नही है तथा आपका आभार प्रदर्शित करने।"

"आपके राज्य मे कौनसा कष्ट हो सकता हे?"

वार्ता समाप्त हो गयी।

दूसरे दिन उन्हे गजसिह जी की हवेली मे ले गये। नाहरो के दरीखाने मे दरबार हुआ। तीनो महाराजाओ के एक सी 'गादिया' लगायी गयी। इस दरबार मे दुर्गादास व मुकुन्ददास चपावत भी थे। रात को एक गोठ का आयोजन था किंतु राणा जी के काका बहादुर्गसिह

जी के अप्रत्याशित निधन से यह आयोजन स्थगित कर दिया गया ।

जयसिंह जी, अजीतसिंह जी तथा दुर्गादास के ठहरने के समाचार शाहजादे मुईजुद्दीन जहांदारशाह के पास पहुँचा । उसने तुरन्त एक निशान लिख कर भेजा—अजीतसिंह,जयसिंह और दुर्गादास जागीर और तनख्वाह न मिलने की वजह से भाग गये है। आपको चाहिए कि आप उन्हे अपने यहा पनाह न दे और उन्हे समझा दे कि वे बादशाह को अर्जियां भेजे । मैं उन्हे माफी दिला कर उनकी जागीरे वापस करा दूंगा ।

दोनो राजाओ से सलाह-मशविरा लेने के बाद राणा जी ने दुर्गादास से भी इस पर परामर्श लिया । दुर्गादास ने अर्ज किया, "राणा जी, इस समय हम लोग निर्बल हैं । लड़ने व विरोध करने की शक्ति भी हममे नही है, आप हमसे अर्जियां लिखा कर बादशाह को भेज दे तथा हमे अपनी शरण मे ही रखे ।"

ऐसा ही किया गया ।

कुछ समय तक बादशाह के पत्रोत्तर की प्रतीक्षा की गयी । इस बीच जयसिंह जी का विवाह अमरसिंह जी की लड़की चन्द्रकुंवर से हो गया । जब कोई सतोषजनक पत्र नही आया तब तीनो राजाओं और दुर्गादास ने परस्पर मंत्रणा की । अत्यन्त गुप्त मंत्रणा हो रही थी ।

राणा जी ने कहा, "अब हमे क्या करना चाहिए ? बादशाह की नीयत साफ नहीं है । वह जयपुर और जोधपुर की शक्ति और अधिकार को सदा के लिए मिटाना चाहता है ।"

अजीतसिंह जी ने उनकी बात का समर्थन किया, "यह सोलह आने सच है । पर हमें इस बार उसका प्रबल प्रतिरोध करना चाहिए ।"

जयसिंह जी ने कहा, "क्यों नहीं, तीनो शक्तियों द्वारा सम्मिलित प्रयास किया जाय । मैं समझता हूं कि हमारी सम्मिलित शक्ति [illegible]

समक्ष बादशाह नही टिक पायेगा ।"

दुर्गादास ने भी यही कहा, "संगठित आक्रमण किया जाय ।"

महाराणा ने इस बार अपने दो योद्धाओ की अध्यक्षता मे अपनी सेना को राजाओ के संग कर दी । दुर्गादास सबसे आगे थे । वे ही इस बार सैन्य-संचालन कर रहे थे । वे इतनी सजगता और गुप्त रूप से अग्रसर हो रहे थे कि बादशाह को उनके प्रस्थान का पता ही नही चला । जब राजपूती सेना जोधपुर के सन्निकट पहुँची तब मेहराब खा ने अपने हाथ-पाव सभालने शुरू किये किंतु राजपूती सेना ने किले को चारो ओर घेर लिया ।

दुर्गादास ने गहरी आत्मीयता से चारदीवारी को देखा । महाराजा अजीतसिंह ने कहा, "आक्रमण कर दिया जाय ।"

दुर्गादास ने उन्हे रोका, "नही महाराजा, व्यर्थ मे जन और धन की हानि करना बुद्धिमानो का काम नही ।"

"आप इस समय ऐसी बाते कर रहे है ? कही दिल्ली–अजमेर से शाही सेना आ गयी तो ?"

"आप घबराइए नही । किलेबंदी इतनी ज़बरदस्त है कि एक पक्षी भी नही आ-जा सकता । ऐसी मजबूत स्थिति मे क्यो रक्तपात किया जाय ? जोधपुर अपनी ही धरती है, यहा के लोग अपने ही लोग है । अपनी ही प्रजा को सताना वीरो को शोभा नही देता । मै फौजदार मेहराब खा से बातचीत करता हू ।"

तुरन्त राठोड दुर्गादास ने मध्यस्था की । उन्होंने मेहराब खाँ को सारी स्थिति से परिचित कराया और बताया, "आप चारो ओर से घिरे हुए हैं । शाही सेना की मदद की आशा मे आप अपने प्राणो से हाथ धो बैठेंगे, इसलिए आपका आत्मसमर्पण ही श्रेष्ठ रहेगा ।"

मेहराब खा ने अपनी सुरक्षा चाही । इस पर दुर्गादास ने उसे आश्वासन दिया, "आपकी सुरक्षा का जिम्मा मैं लेता हू । मैं आपको

सपरिवार अजमेर तक छुड़वाऊंगा। आपका कोई भी बाल बांका नहीं करेगा।"

अपनी सुरक्षा का इतना बड़ा वचन लेकर मेहराब खां ने जोधपुर का किला खाली कर दिया।

विजय श्री को ललाट पर शोभित किये हुए राजपूती-सेना ने किले के तोरण द्वार में प्रवेश किया। हर्ष ध्वनि से गढ़ गूंज उठा। एक बार फिर दुर्गादास के वृद्ध शरीर में यौवन का प्रादुर्भाव हो गया। उन्होंने मेघ गर्जना की, "राठोड़ राज्य की जय हो। मातृभूमि की जय हो।"

महाराजा अजीतसिंह जी को सिंहासन पर राजकीय परम्परा से आसीन कराया गया।

जयपुर के पदच्युत नरेश जयसिंह जी ने उनका राजतिलक किया। इसके पश्चात् बारी-बारी सभी सरदारों ने भी। राठोड़ दुर्गादास ने महाराजा का अभिषेक करते हुए कहा, "आज मुझे पुन: स्वर्गीय महाराजा स्मरण हो आये हैं। वे प्राय: कहा करते थे—औरंगजेब स्वाभावत: ही हिंदू विरोधी है। यह अपना समग्र देश का अहित करेगा। हमारे जोधपुर की रक्षा करना राठोड़।—आज आपको सिंहासन पर देख कर मुझे अपने कर्तव्य की सफलता पर गर्व होता है। भगवान आपको चिरायु रखें।"

इसके पश्चात प्रतिष्ठित सरदारों के डेरे लगाये गए। सवाई जयसिंह का सूरसागर के महलों में, दुर्गादास का [illegible] पर और राणाओं के सैनिकों का चपावत गजसिंह के बाग में।

भविष्य की योजना पर जब तक विचार न किया जाए तब तक की पूर्ण विश्रांति।

/ / /

२०

पावस की सुधामयी बूंदो का वर्षण आरभ हो गया । चतुर्दिक स्निग्ध-नूतन हरीतिमा वसुन्धरा के अनावृत तन पर आकर्षक वस्त्र की भांति प्रसारित हो गयी । तरु, वन-वल्लियो, तृणो और गुल्मो ने नव जीवन सचारित हो गया । यदा-कदा पर्वत पर इन्द्रधनुष विस्तृत होकर ऐसा प्रतीत होता था मानो प्रकृति ने अपनी रूप सुधा के मधुरिम निर्झर प्रवाहित कर दिये हो । उन दिनो अलौकिक वातावरण था । कभी दिवस वर्षा मे भीग कर प्रकट होता और कभी साझ सद्यस्नाता सी लगती थी ।

जयसिंह जी का विवाह अजीतसिंह जी की लडकी सूरजकु वर से हो गया । इस सम्बन्ध को कराने मे राठोड दुर्गादास का बहुत बडा हाथ था । क्योकि वे जानते थे कि इस विवाह से दोनो भू-पतियो मे हार्दिक सम्बन्ध स्थापित हो जायेंगे फिर हम सम्मिलित होकर मुगलो को अपने देश से निर्वासित करने की चेष्टा करेंगे ।

पावस ऋतु मे प्राय युद्ध बद सा ही रहता था ।

रास्ते कट जाते थे । ऊबड-खाबड हो जाते थे । बरसाती नदिया जो सूख कर पथ प्रशस्त किया करती थीं, पावस मे क्रोधित

सर्पिणियो की भांति फुत्कारा करती थी ।

दुर्गादास इन दिनो प्राय अपने विश्राम-गृह मे रहते थे । राजकीय कार्यों के अतिरिक्त वे कहीं भी आते-जाते नहीं थे । एक बार पुनः वे अपने कौटुम्बिक सुख से बंध गये ।

रात के समय सभी कार्यों से निवृत होकर उनके कुटुम्बीजन राठोड दुर्गादास के चतुर्दिक बैठ जाते । राजनीति, सामाजिक-धार्मिक चर्चाएं चलती ।

दुर्गादास बार-बार एक ही बात कहते, "मुझे समस्त आर्यावर्त की मुक्ति चाहिए । मैं शत्रुओं को अब सहन नहीं कर सकता । उनके अत्याचारों ने हिन्दुओं के धैर्य को समाप्त कर दिया है ।"

"पर आप यह सब कैसे कर सकते हैं ?" महेशकरण ने पूछा ।

"जो व्यक्ति महाराजा अजीतसिंह जी को खोया हुआ राज्य दिला सकता है, वह क्या नहीं कर सकता ? लाडेसर ! इस सत्य को चाहे कोई स्वीकारे या न स्वीकारे, पर यह निर्विवाद है कि जोधपुर की बागडोर मेरे हाथ मे है । इस जोधपुर का असली निर्माता मैं ही हूँ ।"

इन दिनों गर्वपूर्ण उक्तियां कहने मे वीरवर दुर्गादास को गहन शांति मिलती थी । इन बातों मे उनका दंभ झांकता था । यह दंभ अब उनकी असहिष्णुता का परिचायक सा बन गया था ।

दुर्गादास के अधिकार और उनके पृथक विशेष सम्मान से अन्य सरदार मन ही मन चिढ़े हुए थे ही । जब उन्होंने इन गर्वपूर्ण उक्तियों को सुना तब वे महाराजा की चापलूसी करने लगे और अवसर मिलते ही वे इन उक्तियों पर नमक मिर्च लगा कर उनके कान भरने लगे । निरन्तर कान भरते रहने पर महाराजा कुछ खीझने से लगे । फिर भी कभी-कभी उन्हें अपनी महत्वपूर्ण व्यक्तिगत बातों मे दुर्गादास का अनुचित हस्तक्षेप असह्य हो उठता था पर वे उनको महान सहायक

के कारण मौन रहते थे । । किसी तरह का विरोध नही करते थे । किंतु उन्हे प्राय यह भी प्रतीत होना था कि कोई जलन की भावना दुर्गादास जी के प्रति उनके हृदय मे उत्पन्न हो गयी है ।

एक दिन चन्द सरदारो ने आकर महाराजा से कहा, "दुर्गादास जी आजकल आपके बारे मे विचित्र सी बाते करते है । माना कि उन्होने आपके जीवन-निर्माण मे बहुत बडा योगदान दिया है किन्तु यह भी सही है कि हमारा योगदान भी कुछ कम नही है ? इस तरह कि छिछली बाते राज्य–मर्यादा के विरुद्ध होती हे और महाराजा की प्रतिष्ठा को आघात लगाती हैं ।"

महाराजा उस दिन एकदम चिढ गये। बोले, "वे अब सठियाने लगे हें । उनकी बातो पर विशेष गौर न किया जाय ।"

इसी तरह के दुराव दिन-प्रतिदिन महाराजा और दुर्गादास के बीच बढते रहे ।

वर्षान्त हो गया था ।

युद्ध के लिए व्यग्र व उत्सुक राजपूती सेना ने मुगल-सेना पर आक्रमण करने का निश्चय किया । महाराजा अजीतसिह, जयसिह और दुर्गादास ने सर्वप्रथम अजमेर को रोदने की सोची । अजमेर दिल्ली-शाही का प्रमुख केन्द्र था । रसद-शस्त्र और सैनिक सभी यही से आते थे ।

'हमे मेडता से अजमेर की ओर प्रस्थान करना चाहिए । उधर रास्ता भी अच्छा है, और हमे सुविधा भी रहेगी ।" दुर्गादास ने सुझाव दिया ।

"ऐसा ही किया जायेगा ।" महाराजा ने कहा ।

सेना चल पडी ।

साभर के समीप मेवात का सूबेदार सैयद हुसेनखा व गैरतखाँ ने अपनी सम्पूर्ण ताकत से राजपूतो पर आक्रमण किया । वर्षा ऋतु मे मुगल भी सोते हुए नही रहे । उन्होने भी जगह-जगह अपनी किलेबदी

करली थी । पहली मुठभेड अत्यन्त भयानक रूप से हुई और राजपूत पराजित होकर भागे । इस पराजय मे राजपूतों को बहुत बड़ी आर्थिक हानि हुई ।

थोडी दूर जाने पर राजपूती सेना ने डेरा डाला । जयसिंह जी ने कहा, " इस पराजय ने हमारे सभी मसूबो पर पानी फेर दिया है । अब क्या किया जाय ?"

दुर्गादास बोले, "हम अधिक प्रबलता से प्रत्याक्रमण करेंगे । हमे साहस नही खोना चाहिए ।"

अजीतसिंह जी ने पश्चाताप प्रकट किया, "इतना शीघ्र पतन होना लज्जाजनक बात है ।"

"दो की लडाई मे एक हारता ही है । हार-जीत से वीर को निराश नही होना चाहिए ।" दुर्गादास ने कहा ।

"हम निराश नही हो रहे हैं । हम यह कह रहे हैं कि इस पराजय ने हमारे वीरो को कुछ निरुत्साहित कर दिया है ।"

तभी एक राठोड सैनिक अश्व पर आरूढ होकर आया । उसने मारवाड नरेश की जयकार की । सबके कान खडे हो गये । उसने महाराजा से मुजरा करने की इच्छा की । एक आवश्यक काम बताया।

उसे तुरन्त महाराजा के समक्ष उपस्थित किया गया । सैनिक ने कहा, "खम्मा अन्नदाता ! मैं आपको यह समाचार देने आया हू कि सैयद खा और उसके दोनो भाइयो को हमने मार दिया है ।"

"कैसे ?" महाराजा ने अचरज से पूछा ।

"हुआ यह है कि हमारे स्वामी अपने एक हजार सिपाहियो के साथ एक टीले पर खडे थे । सैयद हमे लूटने के लिए आया । हमने तेजी से गोलिया दागनी शुरू की । अप्रत्याशित भीषण गोलीबारी से सैयदो के पाव उखडने लगे । हमारे पहले आक्रमण मे ही वे दोनो तथा उनके पचास आदमी खेत रहे । अपने मुखियो की मृत्यु से शत्रु

घवरा गये और भाग खडे हुए ।"

सैनिक द्वारा इस स्थिति से परिचित होकर राजपूती सेना लौट पडी । वहा उन्होने सचमुच मैदान खाली पाया । साभर पर राजपूती सेना का अधिकार हो गया ।

अब प्रश्न उठा कि इस साभर पर किसका अधिकार हो ? गभीर विचार-विमर्श हुआ । अत मे दोनो नरेशो ने यह निश्चय किया कि इसकी आय बराबर हिस्से मे जोधपुर और जयपुर मे वट जानी चाहिए ।

दुर्गादास का इस निर्णय मे वडा भारी हाथ था । जयसिह जी ने भी उनकी भूरि-भूरि प्रशसा की ।

जब दुर्गादास जाने लगे तब अजीतसिह जी ने उनसे पूछा, "आपका डेरा कहा है ठाकुर सा ?"

विजय के बाद सेना का जो डेरा डाला था, वह पदानुसार होता था । सैनिको का अलग, सरदारो का अलग और राजाओ का अलग ।

दुर्गादास ने गर्व से कहा, "सबसे अलग ।"

"क्यो ?'

"यू ही ।"

"दुर्गादास जी आपका डेरा सरदारो की पक्ति मे होना चाहिए । यह हमारी परम्परा और नियम है ।"

दुर्गादास ने लापरवाही और दभपूर्ण स्वर मे कहा, "महाराजा ! बुरा न माने । मैं उन सरदारो के समकक्ष अपने को नही मानता । फिर मुझे अब अलग ही रहने दीजिए । बहुत ही थोडी उम्र रह गयी है मेरी । मेरे पीछे मेरे लोग मिसल मे डेरा डालेंगे । मुझे उन पक्ति मे मत बिठाइए अन्नदाता ।"

महाराजा गभीर हो गये । सघर्ष की रेखाए उनके चेहरे पर आ गयीं । बोले, "नियम भग करना आपको शोभा नही देता ।...

आपको इसका भी ध्यान रखना चाहिए कि और भी सरदार हैं। वे भी राजवी-ठिकाणेदार हैं। विरोध कर सकते हैं ?"

"मैंने कहा न राजा जी, मुझे उनके संग मत जोड़िए। मैंने मारवाड़ के राजवंश के लिए जो-जो आपदाएं सही हैं, वे उनकी कल्पना नहीं कर सकते। ''आप मेरी सेवाओं को भी देखें। जान बूझ कर मेरा अपमान न करें।"

बात जब तिक्तता पकड़ने लगी तब महाराजा ने वार्तालाप बन्द कर दिया। किन्तु आमने-सामने पहली बार ऐसी बातें हुई थीं। महाराजा अपमान की आग में जल उठे। वे कुछ नहीं बोले। शान्त स्थिर खड़े रहे। दुर्गादास उन्हें प्रणाम करके चले आये।

आकर अपने डेरे में उद्विग्नता से चहलकदमी करने लगे। सोचने लगे—अधिकार की प्राप्ति के संग यह दंभ ? क्या महाराजा भूल गये कि वे स्वयं उनके डेरे पर चलकर आये थे ?

दुर्गादास को असीम पीड़ा ने आ घेरा। उन्हें लगा कि उनके वर्षों की तपस्या और त्याग की कोई सार्थकता नहीं। ''उन्होंने जीवन भर अपनी जन्मभूमि और समस्त आर्यावर्त की स्वाधीनता के लिए जो संग्राम किया है—वह इन राजाओं-महाराजाओं की व्यक्तिगत दंभता में लोप हो जायगा।

चाकर ने लाकर उनके समक्ष चांदी के पाटे पर भोजन का थाल रखा तो उन्होंने एक कौर भी नहीं खाया। उन्हें लगा कि आज उनसे नहीं खाया जायेगा। कुछ भी नहीं खाया जायेगा।

महाराजा ने उन्हें ऐसा क्यों कह दिया ? उनका इतना साहस कैसे हो गया ? जिनके जीवन के लिए वे मारे-मारे फिरे ''कन्धों पर बिठाए चोर-लुटेरों की तरह पर्वतीय घाटियों में भटके, उन्होंने उनकी कृतज्ञता को इतना शीघ्र कैसे विस्मृत कर दिया ? वे वाचाल हो उठे। उनकी बूढ़ी आंखों में व्यथा जनित अश्रु छलछला आये।

दिन इसी द्वन्द्व मे व्यतीत हो गया ।

उन्हे सहमा याद आया, "राजा जोगी अगन जल, इनकी उलटी रीत ...

२१

एक भय दुर्गादास के हृदय मे उत्पन्न हो गया कि महाराजा उनके सग कभी भी अप्रीतिकर कार्य कर सकते है । इसलिए वे आतरिक रूप से सजग रहने लगे । रात-दिन उ हे ऐसा खटका बना रहता था कि कोई अनर्थ होने वाला है । महाराजा उनसे मन ही मन रुष्ट है ही ? वे नही चाहते कि अब दुर्गादास उनके राजनैयिक कार्यो मे हस्तक्षेप करें । अत वे समय समय पर उनकी जानबूझ कर उपेक्षा कर देते थे । उन्हे प्रमुख व महत्वपूर्ण आयोजनो व गोठो मे आमत्रित नही करते थे । यह कितनी ममन्तिक वेदना पहुँचाने वाली स्थिति थी दुर्गादास के लिए । फिर भी वे अपमान के इस घूट को विप-बूद समझ कर पी लेते थे । इतने पर दूसरे राजाओ द्वारा निरन्तर दुर्गादास के महत्व और विद्वता के चर्चे अजीतसिह जी सुनते रहते थे । सुनकर

कुढते थे । जलते थे ।

आखिर उनके चाटुकार परामर्श दाताओं ने उन्हें बरगलाना शुरू किया । दिन प्रति दिन दुर्गादास के विरुद्ध बातें सुनी जाने लगीं । उनके घमंड के शोर होने लगे ।

फिर एक दिन—

एक दूत दुर्गादास के पास आया । बोला, "अन्नदाता ने आपको याद किया है ।"

"क्यों ?"

"कहा है कि आपको कहीं बाहर भेजना है ।"

"मुझे ?"

"हां, कोई महत्वपूर्ण कार्य है ।"

"आप मेरी ओर से उनसे क्षमा मांग लीजिएगा । उन्हें प्रार्थना कीजिएगा कि मैं अब बाहर जाने में अशक्त और असमर्थ हूँ । वृद्धावस्था के कारण अब मुझ से यात्रा नहीं हो सकती । अब मैं पूर्ण विश्राम करना चाहता हूँ ।"

दूत चला गया ।

दुर्गादास लेटे रहे । सचमुच उन्हें दुर्बलता ने आ घेरा था । वे थक गये थे । सोये-सोये वे सोच रहे थे कि मारवाड़ की मुक्ति का स्वप्न पूरा हो गया । पर अभी तो मुगलों से सारे भारतवर्ष को मुक्त कराना है । काश ! समस्त हिन्दू राजा एक हो जाते ।

वे देश की स्वतन्त्रता के सपनों में सोये हुये हुए थे । उनका मन एक भारतीय साम्राज्य की स्थापना के लिए अधीर सा हो रहा था ।

तभी उनके पास एक राजाज्ञा आयी ।

एक भयानक राजाज्ञा !

अजीतसिंहजी ने आदेश दिया-श्री दुर्गादास राठोड़ को राजाज्ञा की

अवहेलना करने के अपराध मे मारवाड से निर्वासित किया जाता है ।

दुर्गादास के नेत्रो के आगे, पृथ्वी, आकाश, घर और प्रत्येक वस्तु घूमती दिखाई पडी । उन्होने उस आदेश को बार-बार पढा । आखो को विश्वास नही हुआ । फिर वे अचेत हो कर गिर पडे । उनके हाथ मे अभी भी आदेश था ।

देखते-देखते उनके पुत्र तेजकरण, महेशकरण, अभयकरण, मेहकरण और चैनकरण एकत्रित हो गये । अन्य स्वजन भी आ गये । आदेश खुला पडा था । सबने पढा । पढने के साथ ही सब मे विमूढता आ गयी ।

दुर्गादास जब चेतनावस्था मे लौटे तब उनका व्यथा से आवृत मुख पीला पड गया था । वे काफी देर तक एकात मे मौन बैठे रहे । फिर आकर बोले, "हम आज ही मारवाड को छोड देंगे । हम एक ही पल यहा नही रहेगे ।"

"लेकिन ठाकुर सा, इस आदेश के बारे मे सही जानकारी और स्थिति —।"

बीच मे ही राठोड बोले, "ऐसे स्वार्थी और कृतघन राजा की धरती पर मैं अब एक क्षण भी नही रह सकता । मैं आज ही जाऊगा।

तुम सब लोग चुपचाप रहो और जाने की तैयारिया करो।

आने वाली पीढी कम से कम यह तो सोचेगी कि एक दुर्गादास था। बहुत स्वामीभक्त और कर्तव्यनिष्ठ । उसन अपने स्वामी के पुत्र को अपना रक्त पिला-पिला कर बडा किया । उसका खोया हुआ राज्य दिलाया और बदले मे उस राजा के पुत्र ने उसे क्या पुरस्कार दिया— 'देश निकाला' — उसकी अपनी जन्मभूमि से निर्वासन !

दुर्गादास फूट-फूट कर रो पडे ।

दर्द हवा और वातावरण मे छा गया ।

जब दुर्गादास गाडियो, ऊटो, घोडो व रथो पर अपना सामान

लाद कर मारवाड से जाने लगे तब प्रजा ने मन ही मन उस स्वामीभक्त को नमस्कार किया और महाराजा को धिक्कारा ! सबकी आखें भरी हुई थी । सबके सिर श्रद्धा से झुके हुए थे ।

दुर्गादास अपनी मातृभूमि की सीमा-छोर पर पहुँच कर बिलख पड़े । उसकी धूलि सिर पर लगाते हुए वे रोदन भरे स्वर में बोले, मा, तुमसे विदा होते हुए कलेजा मु ह को आता है । पर मेरी विवशता है । मेरे रक्त के छींटो को, मेरे सघर्ष को, मेरे अनुराग को मत भूलाना और इन नासमझ व दभी लोगों को क्षमा करना । महाराजा को भी ।"

वेदना का सगीत चराचर मे गू ज उठा ।

सार्थ चलने लगा । वर कू चा, वर मझना !

× × ×

२२

दुर्गादास जोधपुर मे मेवाड की ओर चले । उनका हृदय-दग्ध हो रहा था । वे बार-बार मारवाड की धरा को तृष्णा भरी दृष्टि से देख रहे थे । उन्हे पूरी आशा थी कि गौरवमयी परम्परा के धनी मेवाडाधिपति उन्हे अवश्य आश्रय देगे । अपने आगमन की उन्होने पूर्व सूचना दे दी थी । महाराणा सग्राम सिंह के समीप जब दूत पहुँचा तब उन्होंने आश्चर्य मे कहा, "क्या कहा, दुर्गादास जी को 'देश निकाला' दे दिया ?"

"हा, दीवाण जी, उनका एक पुत्र अभी–अभी यह समाचार लाया है ।"

"उन्हे हमारे पास सम्मान से लाया जाय ?"

राणा जी अधीर हो उठे । उन्हे विश्वास नहीं हो रहा था कि दुर्गादास जैसे महान योद्धा और स्वामीभक्त सेवक को कैसे और क्यो देश से निकाल दिया जाता है ? फिर अजीतसिंह जी ? उन्हे तो दुर्गादास ने एक मा की भाति पाल पोस कर बडा किया है । कौन ऐसा त्यागी होगा जो बादशाही प्रलोभन कभी नही आया ? जिसने अपने स्वामी के सुख के लिए अपना सुख छोड दिया ?

"एकलिंग दीवाण को खम्मा ।"

"पधारो, कुवर सा पधारो ।" उन्हे बैठने के लिए गादी दी । स्नेह पूर्वक स्वर मे राणा जी बोले, 'मैं क्या सुन रहा हू ?"

"आप ठीक ही सुन रहे है दीवाण जी, हमारे समस्त परिवार के बलिदानो का आज यही फल मिला है । भविष्य मे कौन त्याग करेगा कौन देश पर उत्सर्ग होगा ?"

राणा जी क्षण भर सोचते रहे । फिर पश्चाताप भरे स्वर मे बोले, "बार-बार सुन कर भी विश्वास नही होता । ऐसा कोई सोच भी नही सकता ।"

'आप विश्वास नही करेगे, पर जब ठाकुर सा ने मारवाड राज्य से विदा ली तब वे नन्हे बच्चे की तरह बिलख-बिलख कर रो उठे । अत्यन्त करुणाजनक दृश्य था । मै आपसे अर्ज करता हू कि इतना वे अपने युवा पोते अनूप की मृत्यु पर नही रोये थे ।"

"बात ही कुछ ऐसी है कुवर सा ।"

"वे आपकी शरण मे आना चाहते हैं । उन्होने आशा की है कि हिन्दूपति-सूर्यवशी राणा जी उनको सम्मान और मान दोनो देगे ।"

'हम हृदय से दुर्गादास जी का स्वागत करते हैं । वे सहर्ष मेवाड मे रह सकते हैं । आप उन्हे कहिएगा कि राणा जी ने कहा है- "एकलिंग के दरबार मे उन जैसे महान योद्धा और स्वतन्त्रता प्रेमी को बहुत बडा स्थान है ।" दुर्गादास का एकलिंग दीवाण के दरबार मे राजकीय सम्मान किया गया । उन्हे भरे दरबार मे विजयपुर की जागीर और पन्द्रह हजार रुपये मासिक प्रदान कर उनके गौरव की वृद्धि की गयी ।

विजयपुर मे रहते हुए भी दुर्गादास अपनी मातृभूमि की मधुर स्मृति को विस्मृत नही कर पाये । हर क्षण उनकी दृष्टि दूर, बहुत दूर, मारवाड की ओर चली जाती थी । मन भर आता था । किन्तु अब

वे उस धरती पर पाव रखना भी नही चाहते थे । उनका भी अपना स्वामीभिमान था । कभी-कभी उनके पुत्र उनसे पूछ लिया करते थे, "यदि महाराजा आपसे क्षमायाचना करके आपको पुन मारवाड के लिए आमत्रित करे तो ?"

"मै अब उधर नही जाऊगा । इस तरह अपमानित होकर अब मै मारवाड प्रदेश मे नहीं जा सकता ।"

धीरे-धीरे दुर्गादास वहा पर जम गये ।

उन्होने अपने एक पुत्र अभयकरण को जयपुर भेज दिया । वहा उसे सम्मान सूचक पद मिला ।

जीवन की गति अत्यधिक मद पड गयी थी । तभी रामपुरा के चन्द्रावतो ने विद्रोह किया । बार बार राणा जी के अनुरोध पर जब वे नहीं माने तब उन्होने दुर्गादास को भेजने का निश्चय किया ।

राणा जी की आज्ञा पाकर दुर्गादास रामपुरा गये । वहा जाकर उन्होने अपने बुद्धि और रण कौशल से चन्द्रावतो के फसादो का अत कर दिया । वहा का सारा प्रबन्ध करके दुर्गादास ने एक पत्र लिखा—श्री परमैस्वर जी सत्य छै जी । सिध श्री उदैपुर सुभ सुथाने सर्व उपमा विराजमान महाराजा धिराज महाराणा जी श्री सग्राम सिंघ जी चरण कमलायनु रा । दुरगदास जी लिषतु सेवा मुजरो अवधार जी ।... और मैंने एकलिंग जी की कृपा से यहा चन्द्रावतो को शात कर दिया है और अब वे भविष्य मे राणा जी की सभी नेग-दस्तूर और वसूली देते रहेंगे । आप यहा के प्रबन्ध के बारे मे कोई चिता न करे । मै सब कुछ ठीक कर लूगा । आप राणा जी को मेरा बार-बार प्रणाम कहे तथा उन्हे कृपा रखने के लिए अनुरोध करे ।

राणा जी ने जब यह समाचार सुना तब वे बहुत प्रसन्न हुए । उन्होंने उनकी बुद्धि-कौशल की सराहना करते हुए कहा, 'यह हीरा है।

इस हीरे की चमक को पहचानने की शक्ति होनी चाहिए। महाराजा अजीतसिंह जी ने इन्हे निर्वासित करके अपनी उज्जवल कीर्ति मे कलंक ही नही लगाया है अपितु अपने को कृतघ्न भी प्रमाणित कर दिया है।"

दुर्गादास वही पर रहने लगे। जीवन बहुत ही बूढा हो गया था। थक गये थे भागते-भागते। सघर्ष करते-करते। आखिर एक दिन उन्होंने अपने समस्त स्वजनो को एकत्रित किया। बोले, "अब मैं लगभग ८० वर्ष का होने जा रहा हू। जीवन भर स्वामी की भक्ति, शत्रुओ से सघर्ष और अपने परिवार की सेवा मे लगा रहा। यह दुनियादारी का चक्र कभी न मिटने वाला है इसलिए मैं अब तीर्थ-यात्रा करने जाऊगा।"

"हम भी साथ चलेगे।"

"नही मेरे साथ किसी एक को भेज दो। मै अब भीड, कोलाहल और परिवार वालो के बीच रहते-रहते ऊब गया हूं। अब मुझे सिर्फ अकेले रहने दो। मै अकेला तीर्थ यात्रा करूगा। अपने प्रभु को याद करूगा। उससे क्षमा याचना करके कहूगा—मेरे प्रभु मुझे क्षमा करना, सौ-सौ बार क्षमा करना। मैने जीवन मे तुम्हे कभी भी एकाग्रता से याद नही किया। यदि अपने स्वामी की जगह तुम्हारी इतनी भक्ति करता तो तुम मुझे अपनी नगरी मे निर्वासित नही करते। तुम मुझे असहाय समझ कर मेरा निरादर नही करते।" उन्होंने सजल आखो से आकाश की ओर देखा मानो वे भीतर ही भीतर पीडा मे तिलमिला रहे है।

सभी की आखे भरी हुई थी। वे प्रतिमा की भाति अचल खडे थे जैसे वे उन्हे नही जाने देंगे।

"मुझे आप मत रोकिए। जाने दीजिए। पता नही, मृत्यु कब आकर मेरे प्राणो के सार को रोक दे। अब मुझे प्रभु दर्शन के लिए

जाने दीजिए ।" दुर्गादास जी विह्वल हो उठे ।

फिर किसी ने कोई विरोध नही किया ।

वे तीर्थ-यात्रा के पावन-पथ पर चल पडे ।

२३

उज्जैन ।

प्राचीन गौरवमय सास्कृतिक तीर्थ स्थल । क्षिप्रा का हरीतिमा आच्छन्न तट । उडते हुए जल-पक्षी । दुर्गादास का सार्थ चल रहा था । तीर्थ यात्रा । परमेश्वर के दर्शन की पुनीत कामना । चलो, मत रुको एक क्षण के लिए मेरे मन । आर्यावर्त के समस्त धामो के दर्शन करलो ।

क्षिप्रा दीर्घ तट। सरिता की लहरो का स्पर्श करके पवन आ रहा था। प्रात दुर्गादास दूर-दूर तक तटवर्ती शिला खण्डो से टकराती वीचियो को देख रहे थे । अप्रत्याशित उन्हे अत्यधिक दुर्बलता प्रतीत हुई । वे शिविर मे लौट आये । सेवको को कहा, "पता नही मन 'अमूज' क्यो रहा है ? लगता है एक पीडा सी उठ रही है ।"

सेवकों ने 'अम्बर' की मात्रा उन्हें दी। पर दुर्गादास को न जाने क्यों प्रतीत हुआ कि यह तीर्थ यात्रा उनकी अनंत महायात्रा हो जायगी। सुदीर्घ महाप्रस्थान! वे शय्या पर लेटे-लेटे ईश्वर को याद करने लगे। उनकी आँखों के आगे घोर तिमिर छाने-छाने लगा।

सारे चाकर और स्वजन व्यथित हो गये।

दुर्गादास टूटते स्वर में बोले, "मृत्यु ही अंतिम सत्य है। कदाचित मेरे भाग्य में केवल अपनी जन्मभूमि से ही दूर नहीं, समस्त राजपूताने से दूर मरना लिखा है। मैं कितना भाग्य हीन हूँ? मुझे मृत्यु से भय नहीं। भय है कि मेरे देश का क्या होगा? वह बाहरी आक्रमणों से सुरक्षित हो पायेगा कि नहीं? कौन ऐसा वीर है जो पुन हिन्दुओं को एक बंधुत्व, एक धर्म और एक सूत्रता के धागे में पिरोयेगा।" उनके लोचनों से अश्रुओं की अविरल धारा प्रवाहित हो गयी। धीरे-धीरे वे तड़पने रहे। उनके चेहरे का ओज मिटने लगा। सभी संगी-साथी विह्वल होकर सुबकने लगे। दुर्गादास की पथरायी सी आँखें अनंत आकाश की ओर लगी हुई थीं। वे कई पहरों ऐसे ही जड़वत पड़े रहे। कदाचित उनकी आंखें, पथरायी आंखें कह रही हों—मुझे स्वाधीनता दो। मेरे देश को मुक्ति दो... स्वतन्त्रता दो। एक संगठन दो बंधुत्व दो

अंत में उन्होंने अपनी आंखें एक पल के लिए बंद कीं और फिर 'हे राम' की आवाज के साथ ऐसे खोलीं जो वापस कभी बंद नहीं हुईं।

शिविर क्रन्दन से भर गया।

शिप्रा के तट पर उस महान स्वाभिमानी, अपूर्व योद्धा और त्यागी का दाह संस्कार किया गया।

शिप्रा के तट से जब उनकी राख उड़-उड़ कर नदी की धारा में प्रवाहित हुई तब चराचर में एक मौन स्वर गुंजित हुआ— चंद्रनि

चैरेवति चलते रहो। मेरे देश के वीरो चलते रहो, और एकता, समता, मुक्ति और बधुत्व का नाद दिग्दिगत मे गु जाते चलो । जो चलता है, वह कभी नही थकता, कभी नही मरता ।

धीरे-धीरे असीम शांति छा गयी । जैसे धरा उनके सताप मे क्रन्दन करके निश्चल-मौन हो गयी हो ।



॥ केसरिया पगड़ी बनी रहे ॥

पगडी की अविचल शान रहे,
हम भी कुछ हैं, ध्यान रहे।
राणा कुंभा सांगा प्रताप—
भामाशा का अभिमान रहे।
जब तक मरु की संतान रहे,
इस पगडी का सम्मान रहे।
सदियों तक बना समाज रहे,
स्वर में बिजली का गाज रहे।
मरुधर के बच्चे-बच्चे को,
बांकी पगडी पर नाज रहे।

—कविवर श्री भरत व्यास